RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17 प्रकाशन तिथि 5 अगस्त 2017

चकमक

बाल विज्ञान पत्रिका जून-जुलाई 2017

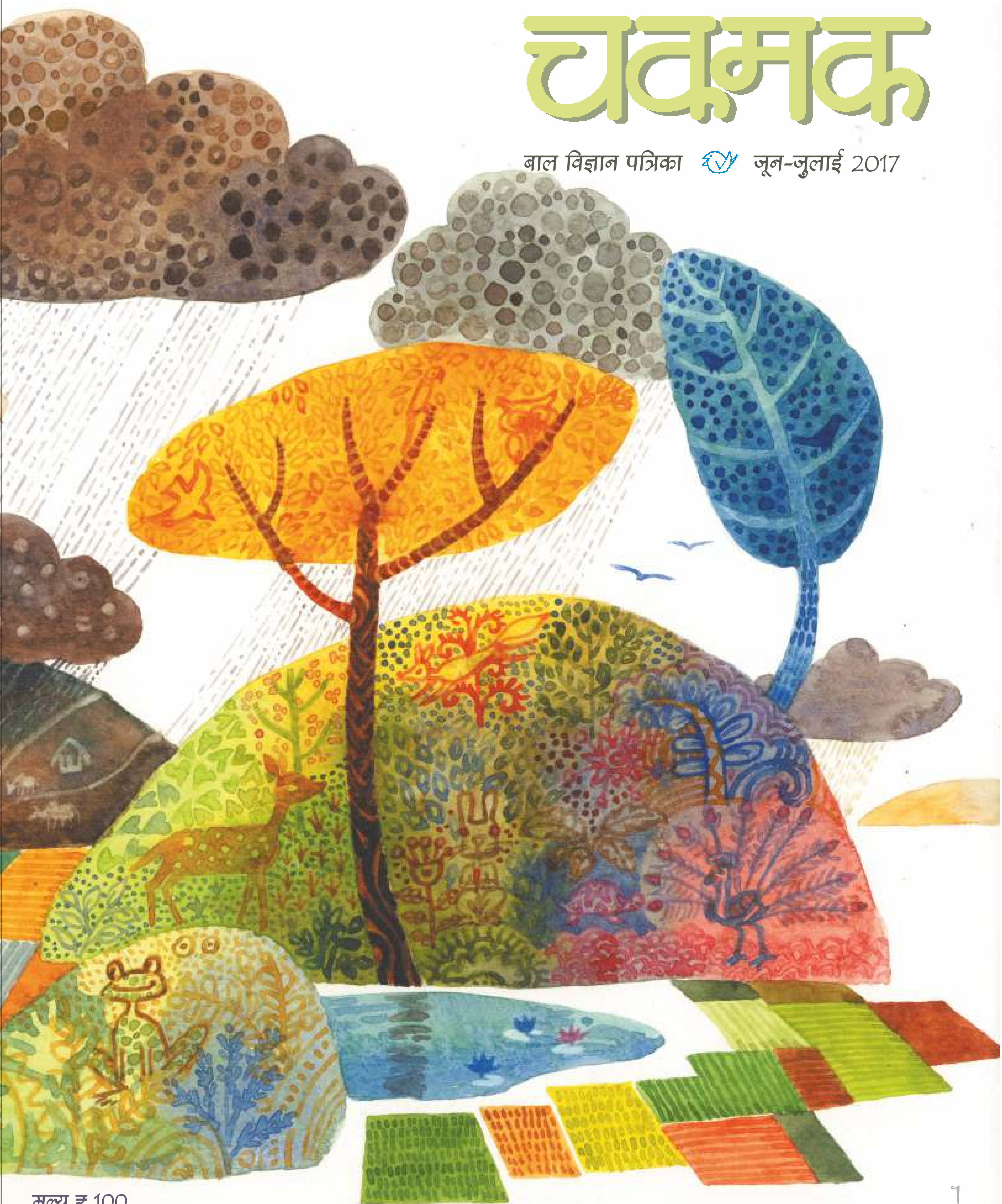

मूल्य ₹ 100

चकमक कविता कार्ड

पढ़ो और फिर चाहो तो अपने दोस्त को इसी कार्ड के दूसरी तरफ एक चिट्ठी लिखकर भेज दो।

दोस्त बनाना पड़ते हैं

- ध्रुव शुक्ल

ऐसे दोस्त कहाँ मिलते हैं
जो पेड़ों पर चढ़ते हैं
वे सारे अमरूद गिराकर
खाते और झगड़ते हैं

ऐसे दोस्त कहाँ रहते हैं
नया चुटकुला गढ़ते हैं
हँसते और हँसाते हमको
मिलकर आगे बढ़ते हैं

ऐसे दोस्त कहाँ ढूँढें जो
नहीं किसी से लड़ते हैं
बना-बनाया सब मिल जाता
दोस्त बनाना पड़ते हैं

चकमक:0755- 4252927 9425010115 chakmak@eklavya.in

कविता कार्ड के चार गुच्छे। एक गुच्छे में बारह कविताएँ। एक गुच्छे की कीमत है सिर्फ पचास रुपए।

इन्हें मँगाने के लिए तुम चकमक के पते पर लिख सकते हो। या हमें फोन कर सकते हो। या चाहो तो सीधे ऑनलाइन मँगा लो - Http://www.eklavya.in/pitara/chakmak_kavita_cards

इस अंक में

4 महुआ की बिनाई - गिरिजा कुजूर

6 द जनरल- जेनेट चार्टरस

14 नींद का झोंका - बाबुशा कोहली

16 उपवास में बुद्ध - अशोक भौमिक

18 गुस्सैल चाचा - शिनची होशी

21 मेरा चाँद डूबा नहीं था - निधि सक्सेना

22 बरखा तुम्हारा आना - दिलीप चिंचालकर

25 मेरा पन्ना

27 धूप बताशा - प्रियम्वद

28 बराक ओबामा के नाम एक खत - सोफिया

30 कलमकारी - निहारिका शेनॉय

32 नाचघर - सोन ख्वाब - प्रियम्वद

38 80 पर्सेंट - चन्द्रमोहन कुलकर्णी

42 और एक दिन - नसीरुद्दीन शाह

45 उल्टे पाँव लौटना

46 जब पेंसिल की नोंक खत्म होगी- विनोद कुमार शुक्ल

50 एक समय की बात है- गीत चतुर्वेदी

52 बोली रंगोली

54 सांडा - करण सोनी (विकास सोनी)

56 ओसेरा - नीलम सिंह

58 सूखा पेड़

61 माथापच्ची

62 गर्मी का पंखा - अंजना त्रिवेदी

64 चल, कुछ और बात करते हैं - रोशनी ख़ातून

67 चित्रपहेली

68 बरसात - इस्माइल मेरठी

बाल विज्ञान पत्रिका

चकमक

अंक 369-370 जून-जुलाई 2017

आवरण चित्र
सुजाशा दासगुप्ता

सम्पादन
सुशील शुक्ल
शशि सबलोक

सहायक सम्पादक
कविता तिवारी
मिताली अहीर

विज्ञान सलाहकार
सुशील जोशी

डिज़ाइन
दिलीप चिंचालकर

वितरण
झनक राम साहू

सहयोग
वरुण ग्रोवर
प्रभात
मिहिर
कमलेश यादव
ब्रजेश सिंह

इकतारा द्वारा विकसित

एक प्रति :	100.00
वार्षिक :	500.00
तीन साल :	1350.00
आजीवन :	6000.00

सभी डाक खर्च हम देंगे।

चन्दा (एकलव्य के नाम से बने) मनीऑर्डर/चैक से भेज सकते हैं।
एकलव्य भोपाल के खाते में ऑनलाइन जमा करने के लिए विवरण-
बैंक का नाम व पता - स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, महावीर नगर, भोपाल
खाता नम्बर - 10107770248
IFSC कोड - SBIN0003867
कृपया खाते में राशि डालने के बाद इसकी पूरी जानकारी accounts.pitara@eklavya.in पर ज़रूर दें।

एकलव्य
ई-10, शंकर नगर, बीडीए कॉलोनी, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र. 462 016, फोन: (0755) 4252927, 2550976, 2671017
फैक्स: (0755) 2551108, e mail - chakmak@eklavya.in, e mail - circulation@eklavya.in, www.chakmak.eklavya.in, www.eklavya.in

महुआ की बिनाई

महुआ बिनाई का काम मार्च से अप्रैल तक होता है। महुआ के पेड़ में फूल फागुन के दस-पन्द्रह दिन तक लग जाते हैं। शुरू में महुआ ज़्यादा गिरता है। बाद में कम होने लगता है। हमारे महुआ के दो पेड़ हैं। जिस से हर दिन चार किलो महुआ गिरता है। यदि महुआ के पेड़ में फूल लग चुके हैं और पानी गिर जाता है तो सारे फूल झड़ जाते हैं। जिससे महुआ कम गिरने लगता है। जिससे बिनने वालों को नुकसान हो सकता है। महुआ बिनने का काम सुबह पाँच बजे से दोपहर बारह बजे तक होता है। यदि किसी के पास महुआ के कई पेड़ हों तो सुबह के पाँच बजे से शाम के चार भी बज जाते हैं। महुआ को तुरन्त लाकर नहीं बेचा जाता। पहले उसे लाकर सुखाया जाता है। जब पूरी तरह से सूख जाता है तब उसे व्यापारी के पास बेचा जाता है। मैं हर रविवार को महुआ बिनने जाती हूँ। अभी तो महुआ थोड़ा कम होने लगा है। जब हम महुआ बेचते हैं तो उसका 30-40 रुपया मुझे मिल जाता है। जिसको मैं अपनी पढ़ाई में खर्च करती हूँ। जब होली मनाते हैं तो महुआ को लाकर पूजा करते हैं।

महुआ बिननेवाले लोग इतनी मेहनत से एक-एक महुआ समेट कर लाते हैं। लेकिन उनको उसका फायदा अच्छे से नहीं मिलता। उसका फायदा दूसरे लोग उठाते हैं।

- गिरिजा कुजूर, आठवीं,
शा.उच्च. प्रा. शाला बोईरमाल, महासमुन्द (छत्तीसगढ़)

चित्र- नीलेश गहलोत

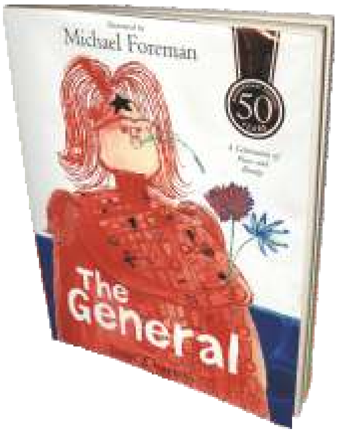

द जनरल

जेनेट चार्टरस

चित्र : माइकल फोरमैन, हिंदी : विदूषक

प्रस्तुतिः अरविन्द गुप्ता

किसी ज़माने में एक जनरल रहते थे।

उनका नाम था जनरल जोधपुर। जनरल साहेब की ख्वाहिश थी कि वो दुनिया के सबसे मशहूर जनरल बनें और सभी मुल्कों के जनरल उनकी फौज की तारीफ करें। इसलिए वो अपने फौजियों को चुस्त और हमेशा काम में लगाए रखते थे।

जब कुछ फौजी बन्दूकों की नलियाँ साफ कर रहे होते तो दूसरे वर्दियों पर इस्त्री कर रहे होते या अपने-अपने जूते और मेडल्स पॉलिश करने में व्यस्त रहते।

जेनेट चार्टरस का जन्म 1938 में इंग्लैंड में हुआ था। युद्ध के भयानक माहौल को महसूस करने और हथियारों की होड़ को देखने के बाद उन्होंने शान्ति के महत्व को और ज़्यादा जाना।

माइकल फोरमैन का जन्म 1938 में इंग्लैंड में हुआ। उन दिनों दूसरे महायुद्ध के बादल मण्डरा रहे थे। जब वे तीन साल के थे एक रात एक खौफनाक घटना घटी। वे गहरी नींद में थे कि उनके कमरे की छत पर एक बम आकर गिरा। यह उनकी पहली याद है। बम उनसे कुछ इंच दूर गिरा, फिर दीवार से टकराकर चिमनी में आकर फट गया। माइकल बाल-बाल बचे। बचपन पूरा युद्ध के साए में बीता। युद्ध खत्म होने के बाद माइकल ने एक शान्तिपूर्ण दुनिया का सपना देखा।

द जनरल *जेनेट और माइकल की पहली किताब है। वे चाहते हैं कि लोग अपने आसपास के प्रति संवेदनशील बने, प्रेमिल बनें। लगभग पचास साल पहले छपी यह किताब थी आज भी उतनी ही सामयिक है जितनी तब थी। जेनेट लन्दन में अपनी दो बिल्लियों के साथ रहती हैं और चित्र बनाती हैं।*

सुबह होते ही, सारे के सारे फौजी परेड ग्राउंड पर हाज़िर हो जाते। अपनी शानदार वर्दियों में वो पूरे जोश से लेफ्ट-राइट-लेफ्ट कर रहे होते।

परेड खत्म होते ही वो अपने-अपने काम में लग जाते। बावर्ची रसोई में खाना पकाने चले जाते, घुड़सवार अस्तबल में घोड़ों को खाना खिलाते और उनकी देखभाल करते।

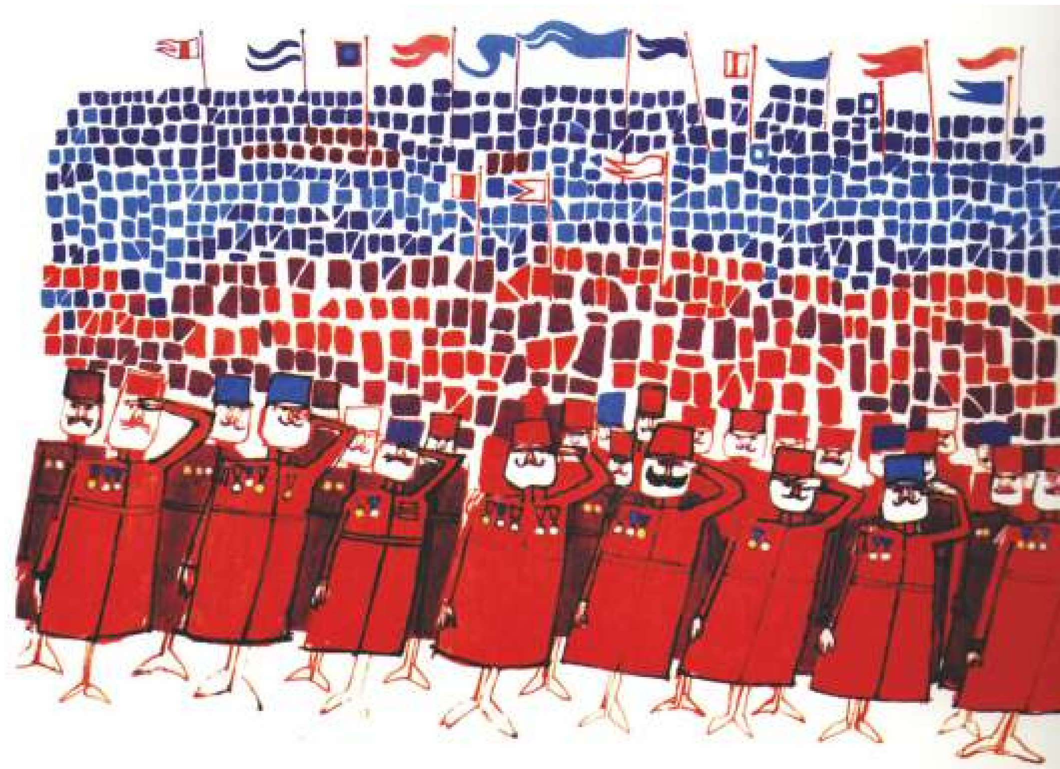

लाल लोमड़ी को अचानक सामने देख उनका घोड़ा डरकर अपने पिछले पैरों पर खड़ा हो गया। और जनरल जोधपुर धड़ाम से ज़मीन पर आ गिरे। उनका घोड़ा सरपट दौड़ता हुआ जंगल में रफूचक्कर हो गया।

जनरल जोधपुर को चोट कोई खास नहीं लगी क्योंकि वो हरी-मुलायम घास पर गिरे थे। घास मुलायम थी और उसमें से भीनी-भीनी खुशबू आ रही थी। ताज्जुब की बात यह है कि जनरल साहिब को घास इतनी पसन्द आई कि उनका वहाँ से उठने का मन ही नहीं हुआ। उन्होंने घास का एक तिनका तोड़ा और उसे चबाने लगे। फिर वहीं लेटे-लेटे, धूप सेंकते रहे।

शाम के समय जब कैम्प में शान्ति होती, जनरल जोधपुर देर रात तक किताबें पढ़ते रहते। दुनिया के मशहूर जनरलों ने युद्ध में कैसे विजय हासिल की? वो उन वीरों के किस्से-कहानियाँ पढ़ते। उन्हें उस बड़े दिन का इन्तज़ार था – जब पूरी दुनिया में उनका और उनकी फौज का डंका बजेगा। और उन पर भी वैसी ही मोटी किताब लिखी जाएगी।

एक इतवार जनरल जोधपुर अपने सफेद घोड़े पर सवार जंगल के पास के मैदान से गुज़र रहे थे। तभी एक चमकीली लाल लोमड़ी ने उनका रास्ता काट दिया।

काफी देर बाद उन्हें याद आया कि अब उन्हें कैम्प में वापिस जाना चाहिए। बड़े अनमने मन से वो उठे और लेफ्ट-राइट करते हुए कैम्प की तरफ बढ़े।

उस पगडण्डी से वो पहले भी कई बार गुज़रे थे। पर आज जो उन्होंने देखा, पहले कभी नहीं देखा था। शायद तब वो जल्दी में रहे होंगे। आज उन्हें गिलहरियाँ, खरगोश, मैदानी चूहे, साही और जंगली कबूतर दिखाई दिए। कुछ दूर पर उन्हें एक मोर भी दिखा।

अर्से बाद उन्होंने चिड़ियों की चहचहाहट सुनी थी। जनरल साहिब एक खेत के पास आए। पूरा खेत सुन्दर जंगली फूलों से भरा था। इतना सुन्दर नज़ारा उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था। वहाँ इतने किस्म-किस्म के रंग-बिरंगे फूल थे, जिसकी उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी। इतने खूबसूरत रंग कोई चित्रकार सपने में भी क्या संजोता!

जनरल जोधपुर कुछ देर तक वहीं खड़े रहे। चुपचाप। वहाँ की अद्भुत सुन्दरता को निहारते। फिर वहीं फूलों के बीच बैठ गए। वो टकटकी बाँधे मधुमक्खियों को देखते रहे जो शहद के लिए अलग-अलग फूलों के पराग-कणों का ज़ायका ले रही थीं। उन्हें लगा कि कोई मधुमक्खी उनकी नाक पर ज़रूर बैठेगी। पर कामकाजी मधुमक्खियों को इतनी फुर्सत कहाँ?

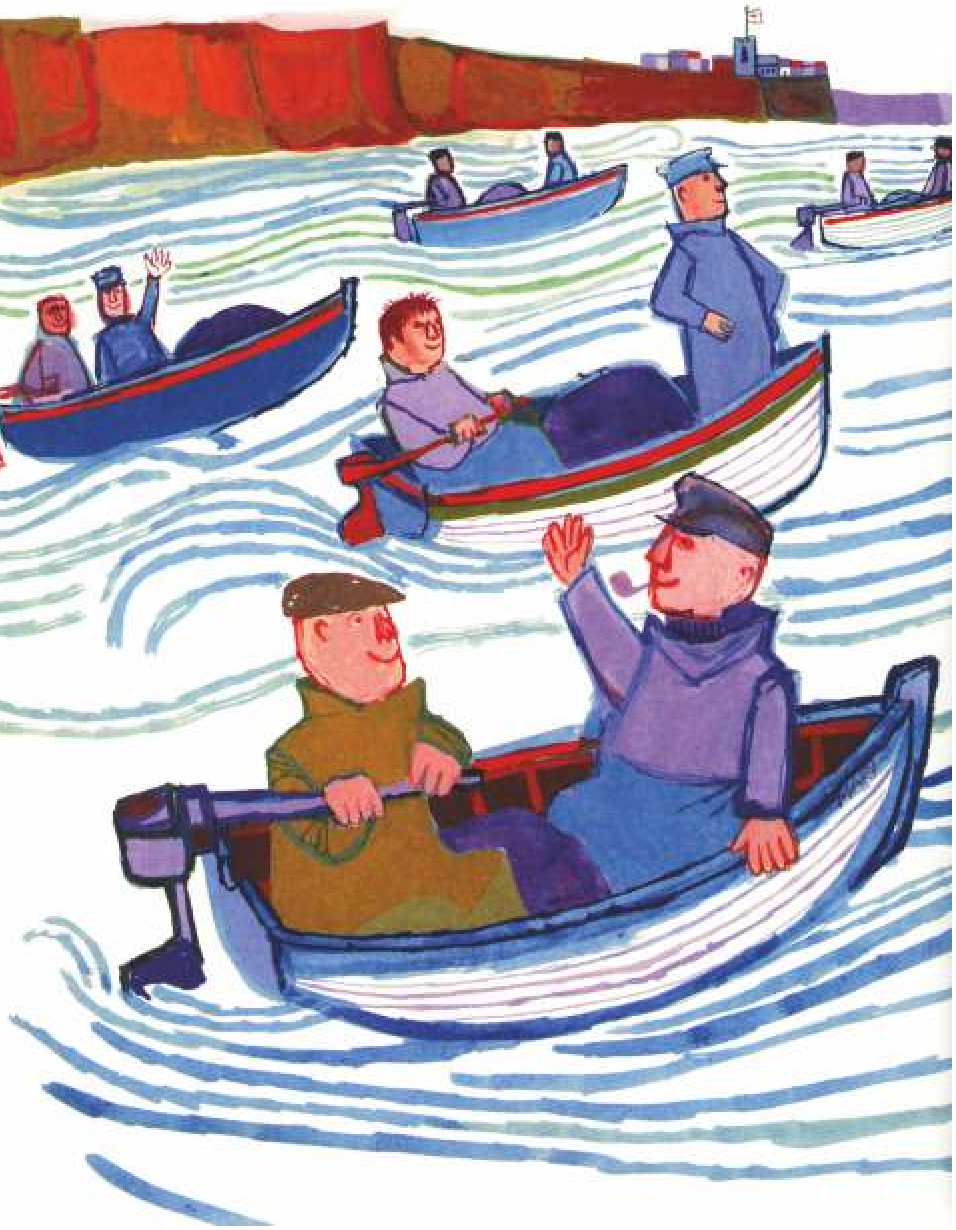

जनरल देर तक रंग-बिरंगे फूलों और मधुमक्खियों को निहारते रहे।

वहाँ गज़ब की शान्ति थी! ऐसी खूबसूरती उन्हें पहले क्यूँ नहीं दिखी? बहुत देर बाद जब वो उठे तो देखा कि उनके बैठने से कुछ फूल दब गए थे। वो फूल मुरझाए और उदास लग रहे थे। जनरल साहिब उन फूलों को वहाँ छोड़कर जाना नहीं चाहते थे। पर उन्हें कैम्प में वापिस लौटना भी था। इसलिए वो दो फूल अपने साथ ले आए।

जनरल जोधपुर के कैम्प में वापिस पहुँचते-पहुँचते रात हो गई थी। उन्होंने पानी के एक गिलास में उन फूलों को रखा और उसे अपने कमरे की खिड़की पर रख दिया। कुछ देर बाद जनरल साहिब सो गए। उस रात वो उन तमाम सुन्दर चीज़ों के सपने देखते रहे जो उन्होंने पिछले दिन देखी थीं – खूबसूरत चिड़ियाँ, जानवर, सूरज, जंगली फूल... फिर उन्हें सपने में लेफ्ट-राइट-लेफ्ट करते हज़ारों फौजी दिखाई दिए। उनके भारी बूटों से इतने ज़ोर का शोर हो रहा था कि जंगल की सारी चिड़ियाँ और जानवर भाग गए थे। लेफ्ट-राइट करते हुए फौजी फूलों को अपने जूतों तले रौंद रहे थे। इससे जनरल साहिब चौंके! उनकी आँख खुली। “रुको! रुको!” वो चिल्लाए। फिर उन्हें ख्याल आया कि वो तो सपना देख रहे थे। जनरल साहिब ने दुबारा सोने की कोशिश की, पर उन्हें नींद नहीं आई।

उन्हें इस बात ने बहुत दुख पहुँचाया कि उनके सैनिकों ने हज़ारों बार, खूबसूरत और निरीह फूलों को अपने जूतों तले कुचला होगा और छोटे जानवरों को डराया होगा। “अब से मैं किसी को न तो चोट पहुँचाऊँगा और न ही डराऊँगा।” जनरल साहिब ने खुद से कहा। “मैं जानवरों, फूल, पेड़-पौधों को प्यार से पलने-बढ़ने दूँगा।”

अगली ही सुबह उन्होंने अपने सैनिकों को बुलाकर कहा कि वे सभी फौज छोड़कर अपने-अपने घरों को लौट जाएँ और कोई नेक काम करें। सब मिलकर अपने देश को, दुनिया का सबसे सुन्दर देश बनाएँ। जनरल साहिब की बात सुनकर सब सैनिक बहुत खुश हुए। पर सबसे ज़्यादा खुश तो जनरल साहिब ही थे।

फिर क्या हुआ?

किसानों ने अपने खेतों को जोतना शुरू किया और अगली फसल के लिए बीज बोए।

मछुआरे जाल लेकर समुद्र में मछली पकड़ने गए।

जनरल साहिब ने आदेश दिया कि उनकी फौजी छावनी को एक सुन्दर शहर में बदला जाए।

उस शहर में दुकानें और स्कूल हों। बहुत सारे पार्क हों, जहाँ बच्चे खेल सकें।

जनरल जोधपुर इस काम से बेहद खुश और उत्साहित थे। वो रोज़ ही लोगों के काम को देखने जाते। पुराने सैनिकों से मिलते। लोग भी जनरल साहिब से मिलकर बहुत खुश होते। हर रोज़ वो उस जगह पर भी जाते जहाँ उन्होंने सबसे पहले जंगली फूल देखे थे।

सर्दियों में वहाँ से फूल गायब थे। फिर भी वो उस जगह को देखते। वहाँ की मिट्टी को अपने हाथों में उठाते। जनरल साहिब को पता था कि बसन्त आते ही मिट्टी में सोए फूल जागेंगे और अपनी गर्दन उठाकर बाहर झाँकेंगे।

धीरे-धीरे जाड़ा खत्म हुआ। जंगली फूलों ने फिर से रंग बिखेरे। पेड़ों पर नई पत्तियाँ और कोंपले आईं। किसानों के बोए बीजों से अंकुर फूटने लगे।

मक्का के पौधे अब कँधे तक आने लगे थे। पेड़ों पर लदे फल पक चुके थे। सुबह-सुबह मछुआरे, अपनी नावों में चमकीले समुद्र में जाते समय खुशी के गीत गा रहे थे।

एक दिन जनरल जोधपुर को दो पत्र मिले। एक चिट्ठी दुनिया के पूर्वी हिस्से से जनरल निकोलाई मारकोविच की थी। और दूसरी, दुनिया के पश्चिमी हिस्से से मशहूर

जनरल कस्टर्ड की थी। दोनों ही ने जनरल जोधपुर के देश में जो कुछ नया चल रहा है उसकी बहुत तारीफ सुनी थी और वे खुद आकर उस जादू को देखना चाहते थे।

जनरल जोधपुर ने तुरन्त ही दोनों उच्च फौजी अफसरों को, अपने देश में आने का निमंत्रण दिया। जब निकोलाई मारकोविच और जनरल कस्टर्ड पहुँचे, तो जनरल जोधपुर और उनके बैंड ने उनका भव्य स्वागत किया। फिर जनरल जोधपुर, दोनों मेहमानों को अपना देश दिखाने ले गए।

जनरल जोधपुर ने उन्हें बाग-बगीचे, जंगल, फल-फूल, सब्ज़ियों और अनाज से भरे खेत दिखाए। फिर बाग-बगीचों, मैदानों में खेलते बच्चे देखे।

दोनों जनरलों ने पशु-पक्षियों से प्रेम करते लोग देखे। अन्त में जनरल जोधपुर उन्हें उस जगह ले गए जहाँ उन्होंने सबसे पहले फूल देखे थे। अब वहाँ मीलों तक, हज़ारों-लाखों रंगों के जंगली फूलों का गलीचा बिछा था। तीनों जनरल वहीं बैठ गए। बहुत आहिस्ता से सम्भाल कर बैठे, ताकि कहीं कोई फूल कुचल न जाए। अन्त में तीनों जनरल, एक-दूसरे को देखकर मुस्कराए। “क्या बढ़िया आइडिया है आपका!” जनरल कस्टर्ड ने कहा। “आपने अपने देश को दुनिया का सबसे सुन्दर देश बनाया है।”

“निश्चित रूप से आपके लोग, दुनिया के सबसे खुश लोग हैं।” निकोलाई मारकोविच ने जोड़ा। फिर दोनों मेहमानों ने मिलकर कहा, “जनरल जोधपुर, आप वाकई में दुनिया के सबसे मशहूर और महान जनरल हैं ।”

फिर पूरी दुनिया के सबसे मशहूर और महान जनरल, खेत के बीचोंबीच, फूलों के कालीन पर लेट गए और सूरज को देखकर मुस्कराने लगे।

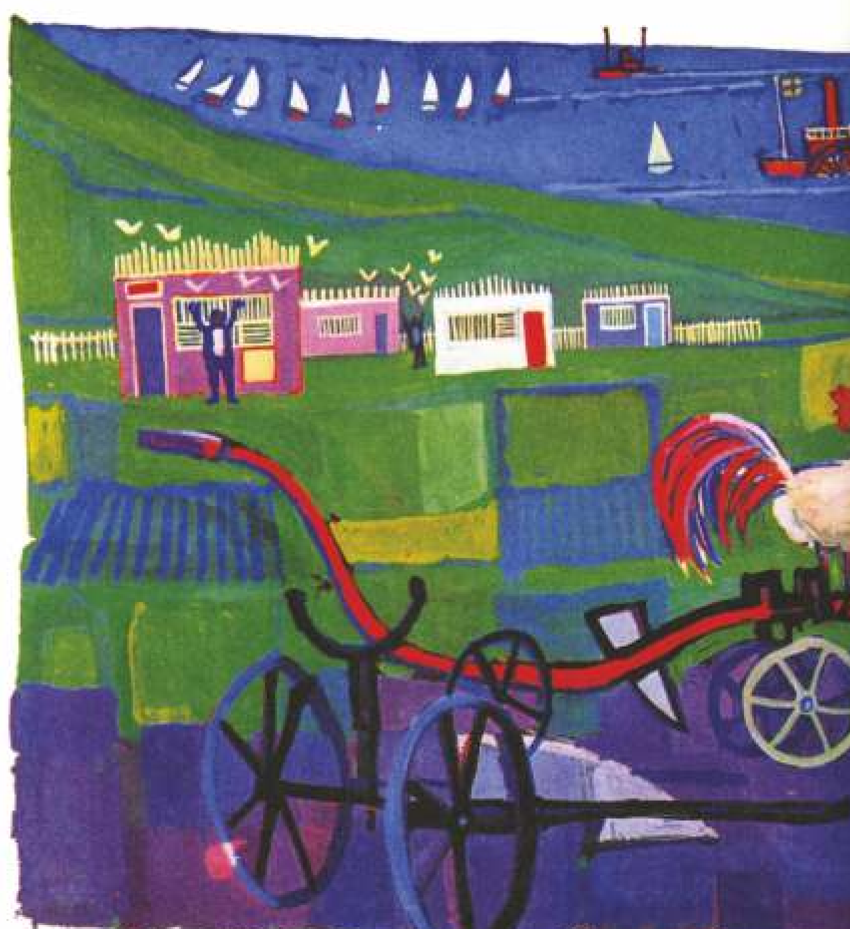

नींद का झोंका

एक रोज़ नींद के ठीक पहले की कविता

बाबुषा कोहली

अब नींद के तेज़ झोंके आएँगे और बाबुषा नाम के पत्ते को उड़ा ले जाएँगे
उन जंगलों की ओर... जहाँ अपने सपने खिलते हों और सारे बिछड़े मिलते हों।
कड़वी दवाई गुल होती हो मस्ती-वस्ती फुल होती हो
जहाँ बिल्लू पिंकी साबू हों और बाबू सिंग बेकाबू हों
चचा का दिमाग-ए-कम्प्यूटर हो फेसबुक-वेसबुक न ट्विटर हो
जहाँ ''पान पसन्द''-सी बोली हो नुसरती धुनों की होली हो
सब पंछी-वंछी मलंग हों और रातों के जोगिया रंग हों
प्रिंसेज का ही शहज़ादा हो और उसका सच्चा वादा हो
प्रिंसेज को नहीं रुलाता हो रूठे तो मनाने आता हो
वो जगह जहाँ मिल जाएगी हम उसी मोड़ मुड़ जाएँगे
एक नींद का झोंका आया है पत्ता बन कर उड़ जाएँगे?
चन्द मिलीग्राम नींद
गिलास भर सपने
पत्थर की दुनिया
शीशे की मुनिया
गुडनाइट दुनिया

1

2

अशोक भौमिक

एक नायाब शिल्प उपवास में बुद्ध

चकमक के पिछले (मई-जून 2017) अंक में हमने लाहौर संग्रहालय में रखी एक अद्‌भुत मूर्ति – उपवास में बुद्ध – पर बात की थी। ध्यान की मुद्रा में बुद्ध की ऐसी अनेक मूर्तियाँ कई देशों के बौद्ध मन्दिरों और संग्रहालयों में देखी जा सकती हैं।

इस बार हम ऐसी ही दो और बुद्ध की मूर्तियों को देखेंगे। पहली मूर्ति, न्यूयॉर्क के विख्यात मेट्रोपोलिटन म्यूज़ियम ऑफ आर्ट में रखी है (चित्र 1)। यह खंडित मूर्ति काफी हद तक लाहौर संग्रहालय की मूर्ति जैसी ही है पर गौर से देखने पर इसकी पसलियों की संरचना का अन्तर साफ-साफ दिख जाता है। गर्दन के नीचे और सीने के बीचोंबीच अँग्रेज़ी के Y अक्षर के आकार जैसी हड्डी का उभार इस मूर्ति की खासियत है। साथ ही यहाँ चादर ओढ़ने का अन्दाज़ भी अलग है। चादर इस मूर्ति में कमर की बजाय कन्धों को लपेटे हुए है। पर सबसे गौर करने लायक है इस मूर्ति की पसलियों (चित्र 2) पर उभरी नसों का जाल!

सरसरी नज़र में ये नसें ही लगेंगी (जैसा लाहौर संग्रहालयवाली मूर्ति में हमने देखा था) पर गहराई से देखें तो इसके पेट और हाथों पर लिपटी बेलें साफ दिखेंगी। यानी ये नसें नहीं बेलों की शाखाएँ हैं। पेट पर बेलों का फैलाव और भी साफ दिख रहा है (चित्र 3)!

कहते हैं, गौतम बुद्ध ने बोधि वृक्ष के नीचे महीनों तपस्या की थी। ज़ाहिर है मूर्तिकार ने तपस्या में लीन बुद्ध को तो नहीं देखा था, पर वह कल्पना कर सकता था कि महीनों तपस्या कर रहे बुद्ध के आसपास घास उग आई होगी। बेलें बुद्ध से लिपट गई होंगी। इस तरह अपनी कल्पना और कौशल से वह उपवास के इस लम्बे समय को बेलों से दिखा पाया।

3

4

कहते हैं एक मूर्ति, आम तौर पर एक ठहरे हुए पल का ही चित्रण होता है, पर इस “स्थिर” मूर्ति में बड़े नायाब तरीके से एक लम्बे अरसे को दिखाया गया है!

एक मूर्ति, आम तौर पर एक ठहरे हुए पल का ही चित्रण होता है, पर इस “स्थिर” मूर्ति में कितने नायाब तरीके से एक लम्बे अरसे को दिखाया गया है! पूरे विश्व के मूर्ति कला के इतिहास में ऐसे कमाल के प्रयोग कम ही हुए हैं।

यह मूर्ति “शीष्ट” किस्म के एक पत्थर को तराशकर बनाई गई है। 27.8 सेंटीमीटर ऊँची यह मूर्ति तीसरी से पाँचवीं शताब्दी के बीच की थी। मेट्रोपोलिटन म्यूज़ियम ऑफ आर्ट ने इसे पाकिस्तान से प्राप्त किया था।

इस मूर्ति से मेल खाती उपवास में बुद्ध की एक और मूर्ति हमें इंडोनेशिया में देखने को मिली। इस मूर्ति (चित्र 4) को गौर से देखो और खुद ही तलाशो कि –

1. इस मूर्ति में चादर कैसे ओढ़ी गई है?

2. मूर्ति के सीने की संरचना अन्य दो मूर्तियों से कितनी अलग है?

3. इसके सीने पर बने बेल-बूटे मेट्रोपोलिटन म्यूज़ियम की मूर्ति से कितने अलग हैं?

4. पैरों को ढँके कपड़े पर लहरों जैसी सिलवटों के बीच घुटनों की संरचना क्या नायाब नहीं है?

इनके अलावा भी इनमें कई अन्तर ज़रूर होंगे जिन्हें इन तीनों मूर्तियों को आसपास रखकर ही खोजा जा सकता है। इसी तरह हम एक मूर्तिशिल्प को देखना सीख सकते हैं!

शीष्ट पत्थर और न्यूयॉर्क का मेट्रोपोलिटन म्यूज़ियम ऑफ आर्ट

जापानी कहानी

◆

शिनची होशी

गुस्सैल चाचा

जापानी से मराठी अनुवाद - निस्सीम बेडेकर
मराठी से हिन्दी अनुवाद - किशोर दरक

दोपहर का समय था। दरवाज़े पर बेल बजी। बच्चे की नींद ना खुले, इसलिए वो धीरे-से उठकर दरवाज़े के पास गई। दरवाज़ा खोलते ही एक आदमी ने झुककर सलाम किया। “मेमसाहब... मेरा मतलब... आप ही हैना? आप तो बहुत ही खूबसूरत और जवान दिखती....”

होगा कोई सेल्समैन, सोचते हुए उसने उसे भगाने का मन बना लिया था, “आपकी इन मीठी बातों का मुझ पर कोई असर नहीं होने वाला। अगर सजने-सँवरने का महँगा सामान लाए हो, तो उसकी मुझे कोई ज़रूरत नहीं है। बच्चे के पीछे दौड़ते-भागते, उसकी ज़रूरतें पूरी करते-करते पूरा दिन बीत जाता है। चार साल का है वह...”

“नहीं नहीं मैडम, मैं तो यही कहना चाहता था कि आप जैसी खूबसूरत औरत को ऐसी चीज़ों की क्या ज़रूरत! और बच्चों से प्यार ही तो घर के सुख की नींव है। आपका लड़का तो बड़ा प्यारा होगा!”

“सो तो है। पर उसकी उम्र ही ऐसी है कि उसकी बदमाशियों की तो पूछो मत। कभी-कभी तो समझ ही नहीं आता कि इसका करूँ क्या..”

“हाँ, यकीनन ऐसा ही होता होगा। इसी उम्र में तो तय हो जाता है कि बच्चे बड़े होकर कैसे इंसान बनेंगे। इसीलिए इस उम्र में अनुशासन का बड़ा महत्व होता है, सिर्फ लाड प्यार ही नहीं। कभी-कभी तो उनसे सख्तीवाला बर्ताव करना ही पड़ता है...।” वह आदमी गम्भीरता से बोला।

इस पर धीमी और उलझन भरी आवाज़ में वो औरत बुदबुदाई, “पर यही कर पाना तो...”

"...कठिन होता है, है ना? सही बात है, दयालू स्वभाव के लोगों के लिए अपने बच्चों के साथ सख्ती से पेश आना मुश्किल काम होता ही है। और इसमें उनकी कोई गलती भी नहीं होती। लेकिन सिर्फ ऐसा कहकर छोड़ा भी तो नहीं जा सकता ना..." उसने कुछ इशारा करते हुए अपनी गर्दन हिलाई।

अब उस औरत को भी यह बातचीत अच्छी लगने लगी थी।

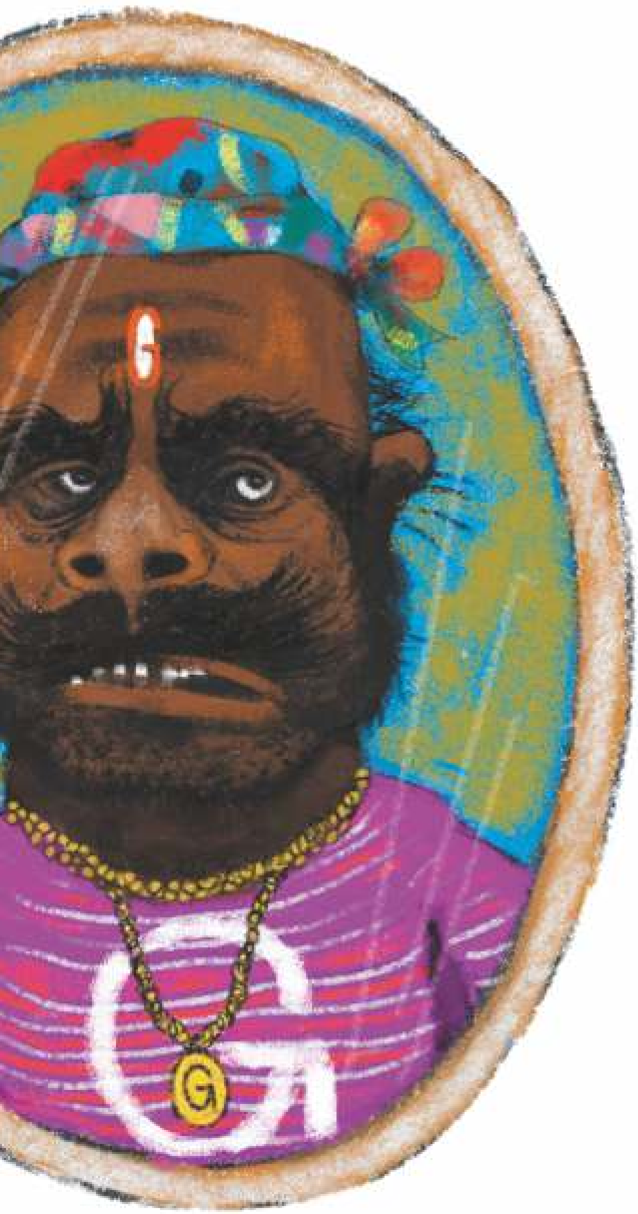

चित्र - चन्द्रमोहन कुलकर्णी

"लगता है आप के पास कोई अच्छी-सी तरकीब है, है ना?"

"अगर आपको कोई ऐतराज़ ना हो तो मैं हमारी कम्पनी के काम का तरीका समझाना चाहूँगा। बच्चों को अनुशासन की ज़रूरत है पर अपने बच्चों को अनुशासन में रखना आजकल किसी को अच्छा नहीं लगता। टी.वी. के प्रोग्राम हों या कुछ और बच्चों को तो एकदम सिर पर चढ़ाकर रक्खा है। पहले कम से कम बच्चों से यह तो कह सकते थे कि 'बदमाशी करोगे तो पुलिसचाचा तुम्हें ले जाएँगे।' आजकल के बच्चे अच्छी तरह जानते हैं कि पुलिस ऐसा कुछ नहीं करती। अगर आप कहो कि बुरे बर्ताव के लिए भगवान सज़ा देते हैं या भूत पकड़ लेता है तब भी बच्चे बिलकुल नहीं डरते..."

"सच कहा आपने।"

"ऐसी चीज़ें जिनसे डरा जा सके, शायद आज के ज़माने में खत्म हो गई हैं। कोई भी घर ले लो, जहाँ देखो बस यही दर्द दिखाई देता है। लेकिन हमारी कम्पनी इसी दर्द को दूर करने की ज़िम्मेदारी लेती है।"

"वो कैसे?" औरत ने उत्सुकता से पूछा।

"संक्षेप में कहूँ तो 'गुस्सैल चाचा' भेजनेवाली कम्पनी है हमारी। बच्चे शरारत करते हों, तो बस हमें एक फोन कीजिए। गुस्सैल चाचा तुरन्त हाज़िर! हमारी कम्पनी के हर आदमी के पास एक मोबाईल होता है जिससे सूचना तुरन्त दी जा सकती है। जैसे – 'चाचा नम्बर बीस, आपके लिए काम है। फलाने इलाके के घर नम्बर तीन में रहनेवाली श्रीमती ...... के पास तुरन्त जाइए। उनका चार साल का बेटा है। केले के छिलके रस्ते पार फेंककर उसने किसी आदमी को गिराया है। सज़ा के तौर पर उसके पिछवाड़े पर पाँच चपत लगाइए।' इसके तुरन्त बाद, 'नमस्ते सर। मैं चाचा नम्बर बीस बोल रहा हूँ। जी, जी, समझा। काम निपटा के पाँच मिनट में लौटता हूँ।' तो ऐसा होता है हमारे काम का तरीका।"

"वाह! हैरत की बात है!"

"हमारी कम्पनी में जाने-माने मनोवैज्ञानिक भी हैं। इसलिए सज़ा देते वक्त खास ख्याल रक्खा जाता है कि वह ज़्यादा कठोर ना हो या बिलकुल बेअसर भी ना हो। इससे बच्चे सबक सीख जाते हैं और बच्चे और माता-पिता के बीच कड़वाहट भी पैदा नहीं होती। इसके बाद जब कभी वो शरारत करें तो 'देखो, गुस्सैल चाचा फिर से आ जाएँगे।' कहते ही बच्चे समझ जाएँगे।"

"बहुत बढ़िया है आपका तरीका! मेरे लिए बहुत काम की चीज़ है

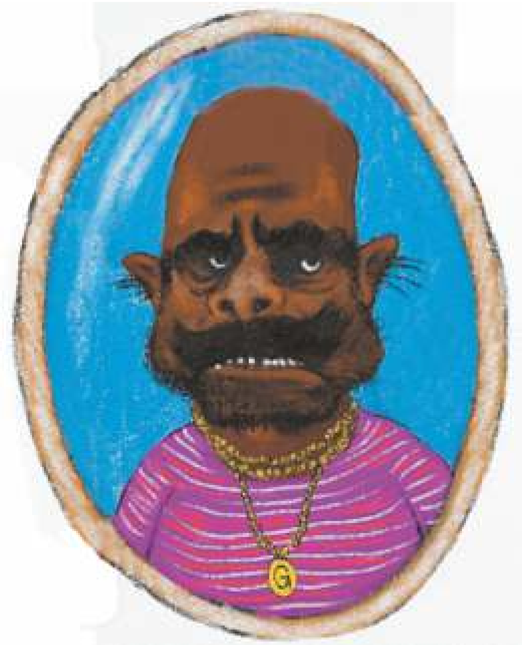

यह। क्या मैं आपकी इस योजना की सदस्यता ले सकती हूँ?"

"हाँ...हाँ ज़रूर! इसके लिए प्रवेश और सदस्यता शुल्क है...." और उसने एक मोटी-सी रकम बताई।

"यह तो काफी ज़्यादा है..."

"अब मैं आपको खामखां सदस्यता लेने के लिए मजबूर नहीं करना चाहता। लेकिन यह ज़माना बच्चों के लिए निवेश करने का ज़माना है। उनकी शिक्षा के लिए, उनके भविष्य के लिए निवेश करना अब ज़रूरी हो गया है। पैसों के बारे में सोचकर अगर आप अभी उसकी गलतियों को अनदेखा करती रहीं तो भविष्य में उसके व्यक्तित्व पर बुरा असर पड़ेगा और तब तक परिस्थितियाँ आपके हाथ से बाहर हो जाएँगी। तब पछताने से कुछ हासिल न होगा। तब तक वक्त बीत चुका होगा। आपका लाडला बेटा है, वह! उसके लिए तो हर चीज़ सस्ती ही...."

"हाँ, सही कह रहे हैं आप।" उसने सोचा – अगर मैं खुद उसे अनुशासन में रखूँ तो इन चीज़ों की कोई ज़रूरत नहीं। लेकिन लगता नहीं है कि यह काम मुझसे बन पाएगा। मतलब इस अनुशासनवाली कम्पनी के अलावा कोई चारा नहीं। उसने तय किया और रकम अदा कर दी। बेटे के भविष्य के लिए!

* * *

रात को पति ऑफिस से लौटा तो औरत ने उसे सारा वाक्या सुनाया। "...तो यह सोचकर मैंने उनकी योजना की सदस्यता ले ली। मैंने कुछ गलत तो नहीं किया ना?"

"नहीं नहीं, अगर बच्चे को सक्षम बनाना है तो उसके लिए पैसा खर्च करना ही पड़ेगा। लेकिन हर महीने इतना बड़ा हुआ खर्च हम निभा तो पाएँगे ना? घर चलाने में दिक्कत तो नहीं होगी?"

"वही तो! कुछ भी कर लो, घर का खर्च तो बढ़ ही जाएगा। दिक्कत तो होगी ही। जब मैंने सारा हिसाब लगाया तो चकरा गई। सोचा उनसे कह दूँ – मुझे नहीं चाहिए आपकी सदस्यता, मुझे मेरे पैसे लौटा दीजिए...."

पति ने सोचा। अपने बेटे को अनुशासन सिखाने की अपनी काबिलियत पर उसे यकीन नहीं था। थोड़ी देर बाद उसने कहा, "और कोई चारा नहीं है। हमें अपने लाडले के लिए यह करना ही होगा। मैं अपने खाली समय में कुछ और काम कर लूँगा.... अरे हाँ! मैं एक ऐसी जगह के बारे में जानता हूँ। कुछ दिन पहले मेरे एक दोस्त ने मुझे एक पर्चा दिया था और कहा था कि तुम भी यह करके देख सकते हो। वह भी उस काम से काफी पैसा बना रहा है। फुल टाइम नौकरी करनेवालों के लिए अच्छा साइड बिज़नेस है। काफी पैसा देनेवाला आसान-सा काम..."

उसने अपनी जेबें टटोलीं और वह पर्चा निकालकर पढ़ने लगा...

एक खास काम के लिए लोगों की ज़रूरत है।

काम का स्वरूप: मोबाइल पर प्राप्त सूचनानुसार जगह-जगह जाकर बच्चों के पिछवाड़े पर चपत मारना।

गुस्सैल चाचा जैसा दिखनेवालों को प्राथमिकता दी जाएगी।

सम्पर्क करें: कर्मचारी प्रबन्धक, बालअनुशासन कम्पनी

निधि सक्सेना

मेरा चाँद डूबा नहीं था, छिप गया था...

चाँद पर बैठी बूढ़ी अम्मा न जाने कब से सूत कात रही थी। एक बार मैंने उसकी उम्र गिननी चाही। उसकी उम्र गिनते-गिनते मेरी सारी उँगलियाँ कम पड़ गईं। उँगलियों की पोरें भी गिन लीं! फिर भी न गिन पाई। उसका काता सूत कैसे नाप पाती? धरती के सारे बिलान्द मिलकर भी पूरे न पड़े। अम्मा तो हमेशा से बूढ़ी थी – मेरे बचपन में भी बूढ़ी और मेरी दादी के बचपन में भी बूढ़ी।

एक बार हुआ यूँ कि सूत कातती अम्मा से कोई गोला गिर गया। वो है भी तो कितनी बूढ़ी! उँगलियाँ सितार के तार जैसे काँपती होंगी। नाव के गुज़रने से जैसे पानी काँपता है। सर्दी में जैसे होंठ थरथराते हैं। ऐसी उँगलियों से गोला कभी तो फिसलना था।

यह गोला जाकर मेरे चाँद से लिपट गया। चाँद की सड़कें कितनी ऊबड़-खाबड़ हैं। कभी इधर लुढ़कता कभी उधर फिसलता वो कन्फ्यूज़ हो गया! गोला उलझकर गुच्छा हो गया। जो चाँद बादल के पीछे छिपा है वो दरअसल बदली नहीं वही गुच्छा है। असली बादल बरसते हैं और बाकी सब नानी के हाथों से छूटे सूत के गोले हैं। हम उन बादलों से भी उम्मीद बाँध लेते हैं! अब जो बादल हैं ही नहीं वो बरसेंगे कैसे! अम्मा हमारे आकाश से तुम अपने उलझे गोले उठा लो! उन्हें सुलझा लो!

यूँ ही रात भर आकाश ताकते आँख थक गई। अम्मा! चरखा कातते-कातते तुम भी तो थक जाती होगी! इस चाँद का रंग तुम्हारे सूत से ही सफेद है। तुम्हारे बाल उस सूत से भी ज़्यादा रोशन हैं। तुम खुद नहीं गड़बड़ा जातीं – कहाँ चरखा, कहाँ सूत, कहाँ चाँद! अकेली तुम! रोज़ देखती हो धरती लेकिन चाँद से कोई कर भी क्या सकता है? मैं बादल देख छाता लेके जाती हूँ। पर सूत का उलझा गुच्छा कभी बरसता है?

एक दिन कागज़ को कंचे पर लपेटा और मैंने अपना पैगाम चाँद की तरफ उछाल दिया। उसके माथे पर चरखेवाली अम्मा का पूरे चाँद वाला पता लिखा था। जवाब की फिर राह भी देखी। लेकिन जवाबी चिट्ठी न आई। कुछ रातों मैंने सिर तक चादर नहीं ओढ़ी। रात भर चाँद ताका।

एक उनींदी सुबह जाकर दूब पर ओस की जगह चाँद से जवाब आया। अम्मा लिखती है – भीग जाती हो तो? नमक की थोड़े बनी हो। तुम्हारे मोहल्ले की कुछ छपाक की आवाज़ें चाँद तक सुनती हूँ।

कितना मन करता है, कभी यूँ कूदने का लेकिन! यहाँ तो कभी रिमझिम फुहार हुई ही नहीं। बारिशों में भीगा करो! बारिशें हमेशा और हर जगह नहीं होतीं। सूखी धरती से पूछना! चाँदवाली अम्मा भी दादी की तरह, पुराने पत्तों-सी कुरकुरी बात करती है।

एक रोज़ बस स्टॉप पर अपना छाता भूल आई। पीछे डूबती आवाज़ में कोई पूछ रहा था, "किसी का छाता छूट गया है!"

चित्र : निहारिका शेनॉय

बरखा तुम्हारा आना

दिलीप चिंचालकर

चित्र : दिलीप चिंचालकर

वर्षा, मैं कब से तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा हूँ। इस बरस जब जेठ में गर्मी असहनीय हो गई, ऐन आम के मौसम की भरी दोपहरी में कोयल चुप्पी साधे पत्तों में दुबकने लगी तब से। मेरे बगीचे की बुलबुल गाना भूल गई। फाख्ताओं का हुमकना बन्द हो गया। कबूतर अण्डे दे-दे कर आजिज़ आ गए। नवतपा लगा तब लगा था बस, तुम दूर नहीं हो। अब तक तो ऐसा ही होता रहा है कि नवतपा खत्म होते-होते तुम आ ही जाती हो। फिर रोहिणी भले ही गल जाए। ठीक है रोहिणी गल जाने पर तुम अपना आना चालीस दिन आगे बढ़ा देती हो। खेतों में बीजों की बुवाई चौपट हो जाती है। उमस से जी घबराने लगता है। पानी की हाय-हाय बढ़ जाती है। मगर तुम्हारा आना उस तपिश में सब को कितना सुखकर लगता है।

बगीचे में सफाई करते समय मैंने कुछ गमलों के नीचे चींटियाँ देखीं, साथ में उनके अण्डे भी थे। लेकिन उनमें कोई हड़बड़ाहट नहीं हुई। उलटे वे इस कदर रमी हुई थीं मानो उन्हें तुमसे से कोई देना-लेना ही नहीं। हमने तो तुम्हारे खौफ में पिछले पखवाड़े साल का गेहूँ भर लिया। इधर देखो तो चींटियों को उनके अण्डों को सूखी जगह ले जाने की अभी भी कोई जल्दी दिखाई नहीं दी।

*नवतपा के दौरान रोहणी नक्षत्र होता है। उसमें बारिश आ जाने पर रोहणी गल जाना कहते हैं।

मेरे बगीचे में रहने वाली श्यामा रोज़ मुँह अँधेरे जब गाना शुरू करती तो नींद में भी मुझे तुम्हारी याद आ जाती। दिन चढ़े जब वह गाती, मुझे लगता कि उसे तुम्हारी आहट मिल गई है और तुम आसपास ही कोस-दो कोस पर हो। बहुत दिनों तक तुमने यूँ भुलावे में डाले रखा। फिर मैं पास के बबूल वन में जाने लगा, इस उम्मीद में कि वहाँ टेर लगाता कोई पपीहा (चातक) मिल जाए! सुना है तुम्हारे बारे में उसका कयास बहुत सटीक बैठता है। मगर उस वीरान सन्नाटे में केवल झींगुर बोल रहे थे। यदि इस बात में ज़रा भी दम है कि पपीहे की प्यास केवल स्वाति नक्षत्र में तुम्हारी पहली बूँदों से ही बुझती है तो तुम्हें उसी की खातिर जल्दी आ जाना चाहिए। इस मामले में अब मुझे मोरों पर तनिक भी भरोसा नहीं रहा है। न दिन देखना, न रात, न गर्मी, न बरसात जब मनचाहा तब केऊँ...केऊँ का शोर मचाने लगते हैं। तुम्हारी गैर मौजूदगी में तोतों ने सारे कच्चे अमरूद नोच कर नीचे गिरा दिए हैं। इस बार अमरूद की बरखा-बहार तो भूल ही जाओ।

परिन्दों की ताक में शाम को आसमान में एक तीतर के रंग की बदली दिखाई दी। तब पक्का लगा कि इसके दिखने बाद वर्षा, तुम्हारे आने में कोई सन्देह बाकी नहीं है। पता नहीं रात में कैसी आँधी चली और जहाँ तुम नहीं जाती, पड़ोस के उस निमाड़ जा कर तुम बरस गई। मेरा मन उदास हो गया। यानी हमारे बगीचे में जतन से लगाए नीम, पीपल, सहजन, अमरूद का कोई अर्थ ही नहीं। माईक्रो-क्लाईमेट नाम की कोई चीज़ ही नहीं। और निमाड़ का सूखा बंजर अचानक तुम्हारा सगा हो गया? तुम्हारा भी क्या दोष? तुम पछुआ हवाओं पर तैरते जिन बादलों पर सवार हो कर आती हो, सुनते हैं उन्हें दूर के कोई पर देसी अल-नीनो और ला-नीना बहका देते हैं।

मैंने बिल्लियों पर ध्यान रखा कि कहीं वे ज़मीन तो नहीं खोद रहीं! कहीं गौरैयाँ धूल में लोट तो नहीं लगा रहीं। चुहियों की तबियत का अन्दाज़ लेने की कोशिश की। छत पर जाकर देखा कि कहीं वहाँ पड़ी खटिया अपने आप अकड़ तो नहीं गई। डिब्बे खोल कर देखे कि नमक और गुड पसीज तो नहीं गए। क्योंकि कहते हैं कि ये सब तुम्हारे आने के लक्षण हैं। मेरे बगीचे में रहने वाला मेंढ़क का जोड़ा पिछले हफ्ते गर्मियों की नींद पूरी कर बाहर आ गया। मैंने मेंढकी से पूछा, "बई, बरखा कदे आवेगी?" तो वह बेचारी बोली, "हूँ कई जाणू दादा।"

"लो, इणा गेली के पतोईन की उतरता जेठ में इका मरद का बोलणे से पाणी आवे हे।"

...और गोया उलाहने पा कर तुम आ ही गई।

. . .

बगैर खबर किए, बगैर आहट किए वर्षा आ धमकी। देर रात छत पर लेटे गुलज़ार साब की पंक्तियों में राहत खोजते हुए अभी आँख लगी ही थी कि वर्षा दबे पैर आ गई। चादर-बिछौना सम्हाले दौड़ते उतने में उसने भिगो दिया। खुली खिड़की से गर्म ताज़ा गीली मिट्टी की खुशबू पूरे कमरे में पसर गई। वर्षा आई चुपचाप मगर फिर गाजे-बाजे (बिजली) के साथ भोर तक जमी रही। उजाला फैलने पर देखा, आँगन टहनियों, पत्ती-निम्बोलियों से पटा पड़ा था। ऊँचे नीम की पत्तियों से अभी तक बूँदें टपक रही थीं। "अरे, बारिश आ गई और रात तक मुझे इसके आने का आभास भी नहीं हुआ?"

सुबह धूप निकल आई। बगीचे में मुआयना करने निकला तो फुटबॉल लिली का फूल दिखा। पानी से तरबतर वह हवा में डोल रहा था। साल में एक बार खिलनेवाले इस गमले के फूल और बारिश की दोस्ती मैं कैसे भूल गया? वह बिना नागा हर साल इसे भिगोने आती ही आती है। ये इतने सारे घोंघे जो निकल आए हैं कल भी यहीं कहीं रहे होंगे, मेरी ही नज़र चूक गई। छोटे-छोटे चींटे बगैर दिक्कत निम्बोलियों के बीच घूम रहे थे। कल तक सूखे पत्तों को उलट-पुलट कर कीड़े खोजनेवाली सात बहनें पंखों का सिंगार करते हुई मुँडेर पर बैठी थीं। बगीचे

में हर साल घोंसला बनानेवाली बुलबुल खुश थी कि उसके बच्चे पहले ही उड़ गए थे। कुछ ही घण्टों में सभी का कामकाज जैसे वर्षा ने पलट दिया था।

जादू की छड़ी घूम चुकी है। मुझे भरोसा है कि अब कुछ ही समय में ज़मीन पर पड़े बीज उगने लगेंगे – पौधों के ही नहीं, कीड़े-मकोड़ों के भी। तितलियों के, केंचुओं के भी।

जंगल-बगीचों में जितनी पत्तियाँ नहीं फूटेंगी उससे ज़्यादा प्राणी निकलेंगे। रामजी की गाएँ आएँगी और रामजी के घोड़े भी। अब आकाश में बादल छाने से जितने सितारे गुल होंगे उतने फूल चाँदनी के पेड़ पर खिलेंगे। बारिश सफेद फूलों का मौसम है – चम्पा, जूही, चमेली, हरसिंगार, मौलश्री और कई सारों का।

बारिश में ही तो मछलियाँ और नदियाँ अपने मायके लौटती हैं। मछलियाँ अण्डे देने के लिए और नदियाँ फिर एक बार अपनी सखियों (सहायक नदियों) के साथ अपना बचपन जीने के लिए। फिर एक बार समुद्र की ओर चल पड़ने के लिए। अपनी बड़ी दीदियों से मिलने के लिए, शहरों और बाँधों के साथ खिलवाड़ करने के लिए और किनारों को उपजाऊ मिट्टी का उपहार बाँटने के लिए।

मैं कभी अन्दाज़ नहीं लगा पाया कि वर्षा में चींटियाँ कहाँ चली जाती हैं? बिल्लियाँ जिन्हें पानी नापसन्द है वे ये गीले दिन कैसे गुज़ारती हैं? झड़ी के दिनों में क्या पंछी उपवास करते हैं? जिन कौवों के घोंसलों में कोयल अण्डे दे देती है उनके अपने परिवारों का क्या होता है? जब हफ्तों बादल छाए रहते हैं तो सूर्यमुखी के फूल को कैसे पता चलता है कि सूरज किस ओर है?

पपीहा (पाईड कुक्कू) अफ्रीका प्रवास से लौट आया है और अब कीकड़ के पेड़ पर बैठकर पागलों की तरह चिल्ला रहा है – पाउस आला-पाउस आला-पाउस आला (मराठी में वर्षा आ गई-वर्षा आ गई-वर्षा आ गई)। हाँ, वर्षा आ गई है!

मेरा पन्ना

एक मज़ेदार घटना

जब मैं तीसरी कक्षा में पढ़ती थी तब गर्मियों की छुट्टियों में मैंने और मेरी दोस्त अपूर्वा ने तैराकी की क्लास जाना शुरू किया। हम दोनों तैरना सीखना चाहते थे लेकिन हम दोनों के ही मन में पानी को लेकर डर था।

एक दिन जब मैं पूल के पास में खड़ी थी अपूर्वा आई और उसने अचानक से मुझे पूल में धक्का दे दिया। डर के मारे मैं रोने-चिल्लाने लगी। हमारे कोच ने मुझे पूल से बाहर निकाला। मैं अपूर्वा से बहुत गुस्सा हुई और मैंने उसे भी पानी में धक्का देने का ठान लिया। मैं बस मौके के इन्तज़ार में थी।

एक दिन मैंने देखा कि अपूर्वा पूल के पास खड़ी है। मैंने उसे पानी में धक्का देने का मन बना लिया। तो मैं उसे धक्का देने के लिए तेज़ी-से उसकी ओर दौड़ी। लेकिन अचानक ही वो वहाँ से हट गई और मैं एक बार फिर पानी में गिर गई। मैं ज़ोर-से चिल्लाई। मेरा प्लान काम नहीं आया। हर कोई मुझ पर हँस रहा था। मैं यह मज़ेदार घटना कभी भी भूल नहीं सकती।

–समीक्षा दीक्षित, दसवीं,
प्रगत शिक्षण संस्थान फलटण, महाराष्ट्र

फूलोंवाली बेल

ऊपर-ऊपर चली गई यह
फूलोंवाली बेल।
हरे-भरे पत्तों पर देखो
धूप-छाँव का खेल।
उड़ती आती तितली इस पर
हवा दौड़कर आती
पत्ती-पत्ती को छू-छूकर
छू मन्तर हो जाती।
हवा धूप तितली फूलों का
चलता रहता खेल।
ऊपर-ऊपर चली गई यह
फूलोंवाली बेल।

–शहज़ाद आलम, चौथी,
डीपीएस पटना, बिहार

–रिया सोनी, पाँचवीं, उदयपुर, राजस्थान

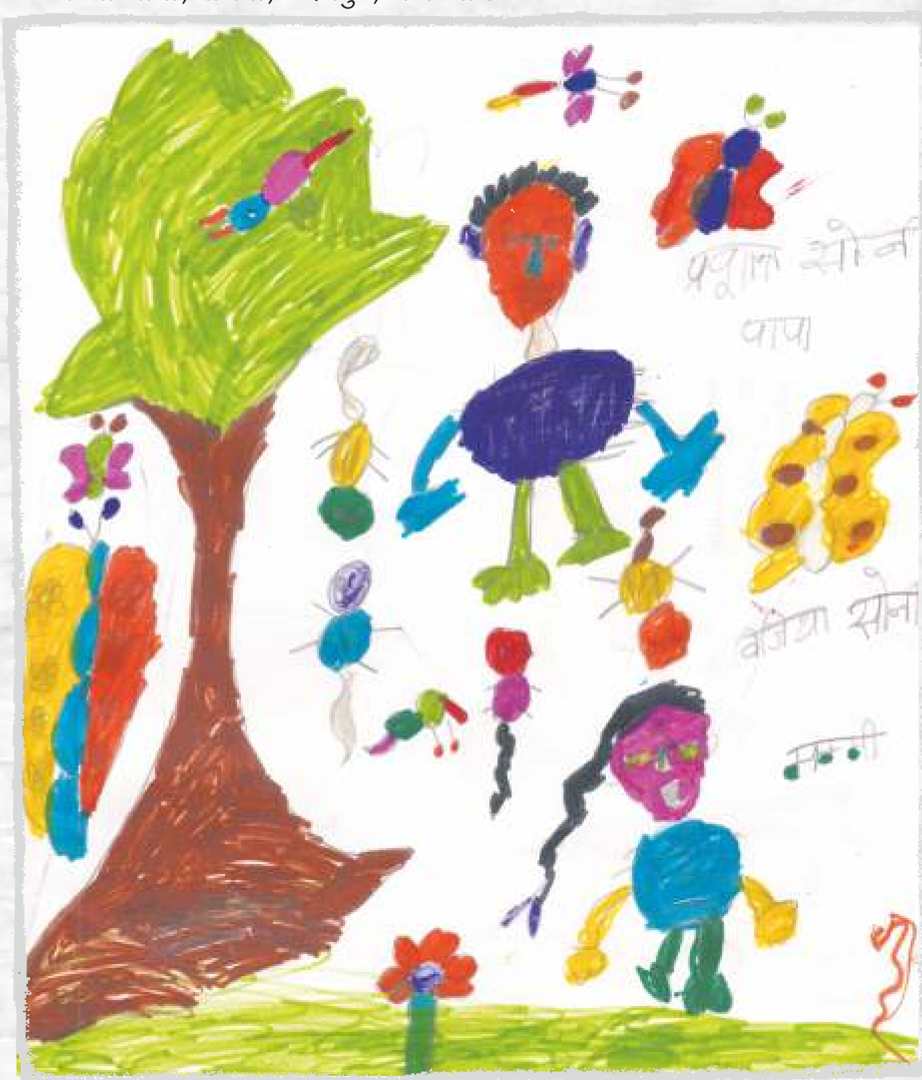

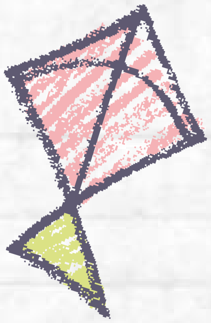

मेरा पन्ना

गर्मी बहुत है, इन्हें बचाओ...

मैं सुबह का निकला हुआ भरी दोपहर में स्कूल से वापिस अपने घर जा रहा था कि मेरी गली के मोड़ पर एक चिड़िया का बच्चा गिरा पड़ा था। मैं बहुत घबरा गया और दौड़कर अपनी माँ से उस बच्चे को अपने घर लाने की अनुमति ले आया। पर जब मैंने उसे करीब से देखा तो उसके पास चींटियाँ लिपटी हुई थीं। मैं समझ गया कि वह मर चुकी है। मैं बहुत उदास हुआ। मेरी माँ ने बताया कि गर्मी की वजह से प्यास से तड़पकर इसकी जान गई है। बहुत गर्मी पड़ने के कारण इन्हें आसानी से पानी नहीं मिल रहा। मैं दूँगा इन बेज़ुबान पक्षियों को पानी, अचानक से मेरे मुँह से निकला। मुस्कराते हुए मेरी माँ ने मेरी पीठ थपथपाई। उन्होंने बाज़ार से मुझे एक चौड़े मुँहवाला बर्तन और बाजरा लाकर दिया। अब मैं रोज़ सुबह इस बर्तन में पानी डालकर एक मुट्ठी बाजरे के साथ छत पर रख आता हूँ। जब मैं ढेरों चिड़ियाओं को उस बर्तन में से पानी पीते देखता हूँ तो मेरे नन्हे-से दिल को बहुत सुकून मिलता है।

—नमिश मैनी, पाँचवीं,
डीपीएस लुधियाना, पंजाब

—स्मितकबीर, सात वर्ष, मुम्बई

नन्ही चिड़िया

नन्हे-नन्हे पंखों से वह
उड़ती है उस आसमान में
उसे घूमता-फिरता देख
बस जाती वह मेरे मन में
रोज़ सबेरे वह जग जाती
फिर धीरे-से हमें उठाती
हरदम वह चिक-चिक करती है
लेकिन कभी ना तंग करती है
पेड़ों की डालों मे रहता
है उसका इक नन्हा घर
अपने चूज़ों को वह उसमें
देती है दाने लाकर
अपने बच्चों को सिखाती
कैसे है जीना इस जग में
फिर धीरे-से उन्हें सिखाती
उड़ना इस आसमान में
जीने का अधिकार इन्हें भी
फिर क्यों इन्हें भगाते हैं
उड़ जाती है जब आँगन से
आँगन सूने पड़ जाते हैं
यदि अलोप हो गए ये पंछी
तो क्या अगली पीढ़ी को तुम
इन्हें चित्रों से दर्शाओगे
और आसमान की इस कहानी
को क्या इतिहास बनाओगे

—उन्नति तिवारी, बाल भवन
जबलपुर, म. प्र.

धूप बताशा

प्रियंवद

रोज़ सवेरे
यही तमाशा
टूटे बिखरे
धूप बताशा

करता है
कोई बदमाशी
होगी सबकी
आज तलाशी

चाँद नदी
चिड़िया जुगनू
बैठ गए
उकड़ू उकड़ू

मिली चाँद पे
इक बुढ़िया
नदी छुपाए
थी गुड़िया
सत्रह सरगम

चिड़िया में थीं
टॉर्च जेब में
जुगनू के थी

पीपल नीचे
लगी कचहरी
जज की कुर्सी
चढ़ी गिलहरी

चरमर चरमर
कुर्सी बोली
भागे सब ले
डंडा झोली

हो सकता है
कल यह न हो
धूप बताशा
बना ठना हो

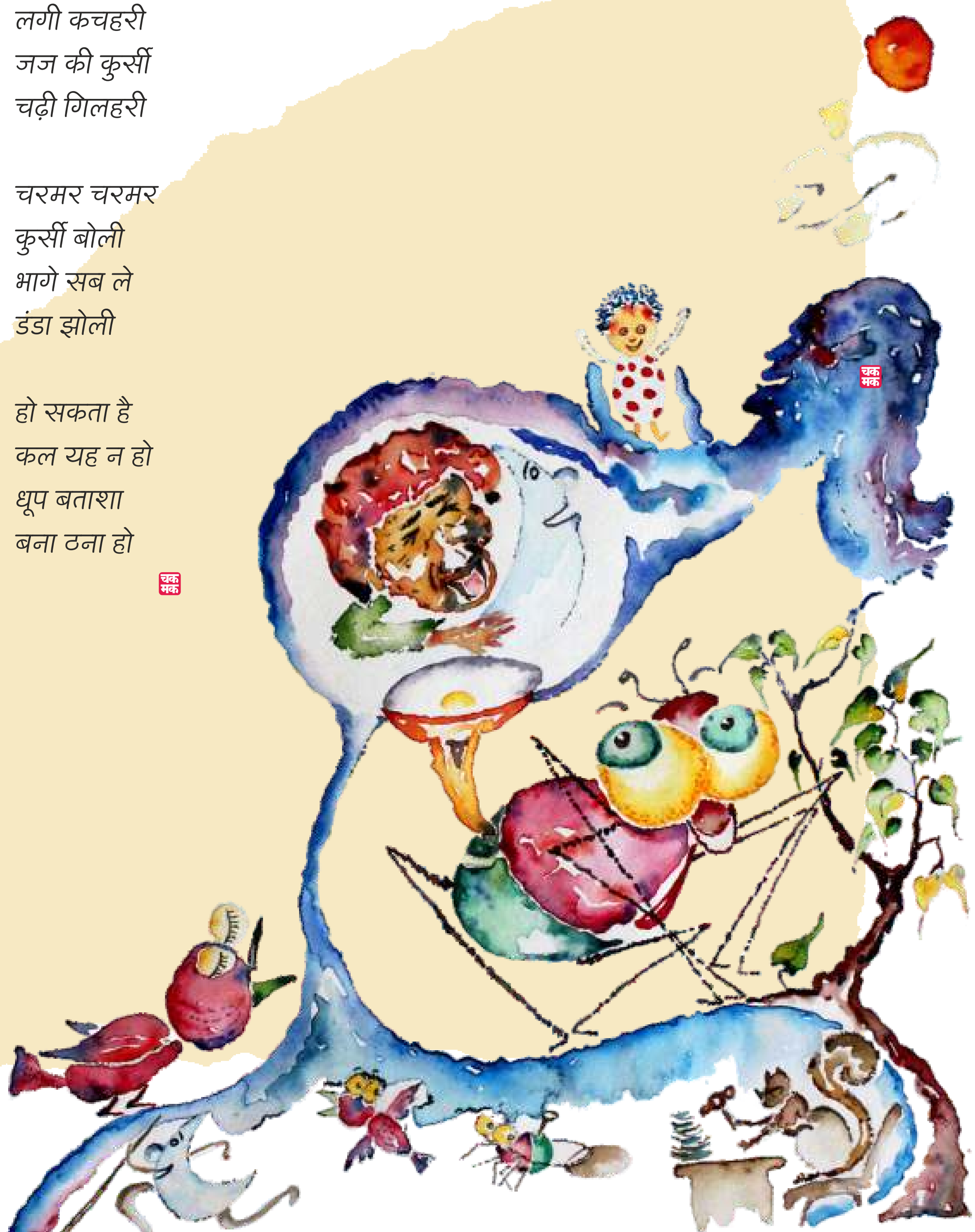

चित्र- वसीम मनेर

प्रिय बराक ओबामा

प्रिय बराक ओबामा,

मैं हूँ सोफिया बेले क्लुग। आपकी दोस्त जिसने आपको खाने पर घर
बुलाया था। याद नहीं, चलो कोई नहीं।
पर मुझे इस बात की इतनी खुशी है कि आपने माना कि दो आदमी एक-
दूसरे को प्यार कर सकते हैं। साथ रह सकते हैं। मेरे दो पिता हैं। और वो
एक दूसरे को बहुत प्यार करते हैं। पर स्कूल के बच्चों को लगता है कि यह
बहुत अजीब बात है। बेहूदी बात है। मुझे इससे बहुत दुख पहुँचता है।
इसलिए मैं आपसे बात करना चाहती हूँ। आप मेरे हीरो हैं। अगर आप
मेरी जगह होते जिसके दो पिता होते और जिसे स्कूल में बच्चे चिढ़ाते हों
तो आप क्या करते? जवाब देना।

आपकी दोस्त सोफिया।
अपनी बेटियों को मेरी ओर से हाय बोलना।

1 नवम्बर 2012

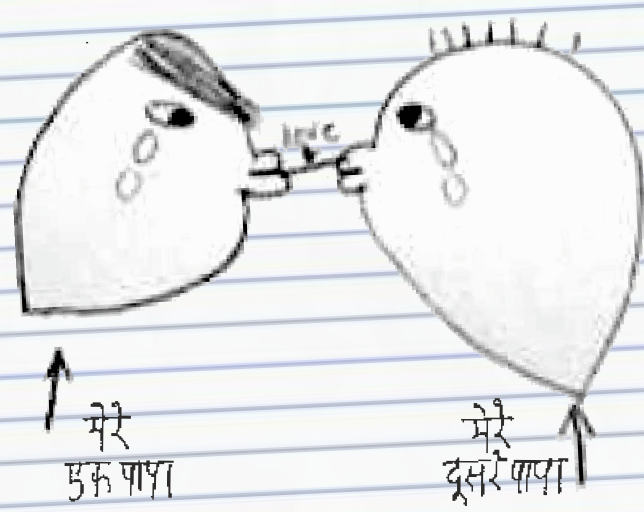

President Barac Obama

प्रिय सोफिया,

अपने परिवार के बारे में इतना सूझबूझ भरा खत लिखने के लिए शुक्रिया। उसे पढ़के मुझे तुम्हारा राष्ट्रपति होने पर गर्व हुआ। अब मैं अपने इस देश के भविष्य को लेकर और ज़्यादा आश्वस्त हूँ।

अमरीका में कोई भी दो परिवार एक से नहीं दिखते। हम इस अलगपन को बहुत अहमियत देते हैं। तुम्हारे दो पिता हैं या एक माँ इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता। सब से ज़्यादा ज़रूरी है उनके बीच प्यार होना। तुम खुशनसीब हो कि तुम्हारे दोनों पिता तुम्हें बहुत प्यार करते हैं। तुम्हारा ख्याल रखते हैं। उनकी खुशकिस्मती भी कम नहीं कि उन्हें तुम जैसी होनहार बेटी मिली।

हम सब एक-दूसरे से अलग हैं और यही बात हमें जोड़े भी हुए है। हम दोनों किस्मतवाले हैं कि हम एक ऐसे देश में रहते हैं जहाँ हम बराबरी के अधिकार के साथ पैदा हुए हैं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हम दिखते कैसे हैं, हम कहाँ पले-बढ़े हुए या हमारे माँ-बाप कौन हैं। इस मामले में सबसे बढ़िया तो यही नियम है कि है कि दूसरों से वैसा ही बर्ताव करो जैसा हम अपने लिए उनसे चाहते हैं। स्कूल में अपने दोस्तों को भी यह नियम याद करवा देना जब वो कुछ ऐसा बोलें जो तुम्हें तकलीफ देता हो।

मुझे खत लिखने का समय निकालने के लिए एक बार फिर शुक्रिया। मेरी खुशनसीबी कि मुझे तुम्हारा साथ और भरोसा मिला। तुम्हारी हमदर्दी से मुझे प्रेरणा मिली। सॉरी हम खाने पर तो नहीं मिल सकते। पर हाँ, मेरी बेटियों शाशा और मलाइया तक मैं तुम्हारी हाय ज़रूर पहुँचा दूँगा।

प्यार के साथ

बराक ओबामा

2012 में 10 साल की सोफिया ने अमरीका के तब के राष्ट्रपति को बहुत प्यार से एक खत लिखा था। और कुछ ही दिनों में उन्हें ओबामा का जवाब मिला। उतना ही प्यार से भरा...

कलमकारों से मुलाकात

निहारिका शेनॉय

अनार के छिलकों से पीला रंग बन सकता है। या गुड़ और रतुआ (जंग) को दस दिन तक गलाए रखने से गहरा काला रंग बनता है। इतना गहरा कि सदियों तक धुँधला न पड़े। मुझे ऐसी बहुत सारी बातें पता चलीं जब मैं आँध्रप्रदेश के श्रीकालहस्ती और मछलीपट्नम के कलमकारी कलाकारों से मिली। कलमकारी आँध्रप्रदेश की एक लोककला है। इसमें ज़्यादातर जड़ी-बूटियों, फूल-पत्तों से बनाए रंगों से चित्रकारी की जाती है। कलमकारी यानी सूती कपड़ों पर कलम से लिखे चित्र।

बहुत पहले फारसी और भारतीय व्यापारियों के बीच कारोबारी रिश्ते थे। इसी दौरान उन पर एक-दूसरे के रीति-रिवाज़ों का प्रभाव पड़ा। कलमकारी भी शायद तभी चलन में आई। "कलम" भी तो फारसी शब्द है! तेलुगु में इसे "व्रतपानी" कहते हैं। श्रीकालहस्ती और मछलीपट्नम में कलमकारी की दो खास शैलियाँ हैं। श्रीकालहस्ती के कलाकार सिर्फ कलम का इस्तेमाल करते हैं (दस्तकारी) जबकि मछलीपट्नम के कलाकार लकड़ी के ठप्पों से कपड़े पे निशाना लगाकर कलमकारी बनाते हैं। मछलीपट्नम के कलाकारों को गोलकुण्डा के सुल्तानों (कुतुब शाही साम्राज्य) का आश्रय मिला था इसलिए उनके काम पर फारसी और मुगल शैली का प्रभाव दिखता है। जबकि श्रीकालहस्ती की कलमकारी में धार्मिक वस्तुएँ ज़्यादा दिखती हैं।

विजयनगर साम्राज्य के दौरान कलमकारी बेहद लोकप्रिय हो गई थी। मन्दिरों में उसका इस्तेमाल होने लगा था। कलमकारी भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में फैल गई थी। 17वीं और 18वीं सदी में इंग्लैंड और फ्रांस में यह "चिंट्ज़" नाम से लोकप्रिय हुई। लेकिन पश्चिमी देशों में औद्योगिक क्रान्ति के बाद कई सामाजिक और राजनीतिक बदलाव आए। इससे "चिंट्ज़" पर रोक लग गई। माँग कम हुई तो कलमकारी का उत्पादन भी कम होने लगा।

आज कलमकारी हर जगह दिखाई देती है – साड़ियों से लेकर चादरों और पर्दों तक में। 19वीं सदी में ऐसा नहीं था। कहते हैं कि इसकी माँग तब इतनी कम थी कि केवल एक ही परिवार का मुखिया कलमकारी कर रहा था। 1956 में समाज सुधारक कमला देवी चट्टोपाध्याय की कोशिशों से ये दूसरों को कमलकारी सिखाने लगे। इससे कलमकारी को एक नई पहचान मिली।

तुम भी एक कलमकारी कलाकार की तरह प्राकृतिक रंग बना सकते हो! चलो, पीला रंग बनाते हैं –

(शेष पेज 37 पर)

नाचघर की सातवीं किस्त

नाचघर : सोन ख्वाब

प्रियंवद

लाजवन्ती माँ के साथ सोन ख्वाब गाँव चली गई थी। दरगाह पर सब वैसा ही हुआ जैसा तय था। अब पाँच दिन से मोहसिन नाचघर नहीं जा रहा था। शहर के स्कूलों के बीच फुटबाल मैच होनेवाला था। मोहसिन अपने स्कूल की टीम में था। स्कूल खत्म होने के बाद रुककर टीम के साथ प्रैक्टिस करता था। घर लौटते शाम हो जाती थी। दस दिन बाद पहला मैच था।

मोहसिन घर पहुँचा तो अम्मी ने बताया सगीर आया था। उसे पूछ रहा था। मोहसिन ने लाजवन्ती को सगीर का पता दिया था। बस्ता फेंककर वह सगीर के घर भागा। पीछे अम्मी चीखती-चिल्लाती रही। मोहसिन रुका नहीं। मोहसिन जब सगीर के घर पहुँचा बुरी तरह हाँफ रहा था।

"क्या हुआ बरखुरदार... इस तरह क्यों हाँफ रहे हो?" सगीर ने पूछा।

"कुछ नहीं...।" मोहसिन ने कुछ गहरी साँस लीं। "आप घर गए थे?"

"हाँ तुम्हें इस तीतर से मिलाना था।"

अब मोहसिन ने देखा। सगीर के पास एक आदमी बैठा था। उसके पैरों के पास एक तीतर कूद रहा था। हाँफते हुए मोहसिन को देखकर वह मुस्करा रहा था।

"आओ बैठो।" सगीर ने मोहसिन को पास बैठने का इशारा किया। मोहसिन ने देखा। सगीर की आँखें चमक रही थीं। भौहें खिंची और होंठ फैले थे। मोहसिन चुपचाप उसके पास तख्त पर बैठ गया। मोहसिन को देखकर सामने बैठा आदमी चुप हो गया था। वह फिर बोलने लगा।

"हाँ... तो सगीर भाई मैं कह रहा था मैं खुद भूखा रह जाऊँ पर इसे रोज़ खुराक में दो पिसे बादाम, दूध, शहद और मुर्गे की रान का रस पिलाता हूँ। खुद सूखी रोटी खाता हूँ।" उसने हथेली बढ़ाई। तीतर कूदकर उसकी हथेली पर बैठ गया। हथेली उठाकर उसने तीतर की चोंच चूमी।

"औलाद को कभी इस तरह चूमा है?" सगीर ने पूछा।

"बात फर्क है... औलाद निकम्मी निकल सकती है पर यह मेरी शान पर मर मिटने को तैयार है। खेल मत समझो। सूरज निकलने से पहले इसे पार्क में ले जाता हूँ। एक घण्टा दौड़ाता हूँ। कुदाता हूँ। हमला करना, पैंतरे बदलना सिखाता हूँ।" अचानक उसने टर्र...टर्र...की आवाज़ मुँह से निकाली। तीतर एकदम से पंख फड़फड़ाता उछला और ज़मीन पर कूद पड़ा। आदमी ने च..च..च जैसी आवाज़ निकाली। तीतर गर्दन उठाकर चोंच से वार करने लगा। हुश..हुश...हुश उसने आवाज़ निकाली। तीतर तेज़ी से फर्श पर दौड़ा... कूदा... बिलकुल अखाड़े के कुश्तीबाज़ की तरह। तीतर उसका हर इशारा समझ रहा था।

"बात आन...बान...शान की है सगीर भाई। इतवार को पूरे शहर के सामने इज़्ज़त दाँव पर लगी है। गंगा किनारे मुकाबला होगा। सुना है बड़े-बड़े तीतरबाज़ बड़ी दूर से आ रहे हैं। खबर तो ईरान और अफगानिस्तान की भी है। अगर मेरा पट्ठा हार गया खुदा कसम उसी दरिया में कूदकर जान दे दूँगा।" वह आदमी रोने जैसा हो गया।

"नहीं...नहीं...यह जीतेगा... इसके तेवर सख्त हैं।" अपनी प्रशंसा सुनकर तीतर ने सर झुकाया।

"इन्शाअल्लाह" वह आदमी उठ गया। ट...ट...ट... उसने आवाज़ निकाली। तीतर कूदकर उसकी हथेली फिर कन्धे पर बैठ गया।

"इतवार को गंगा किनारे आना है सगीर भाई... आप रहेंगे तो हौसला बढ़ेगा। इसे भी लाइएगा।" उसने मोहसिन की तरफ इशारा किया। "तीतर की लड़ाई देख लेगा।"

"ज़रूर आना।" तीतर मोहसिन से बोला। मोहसिन ने देखा। गर्दन तिरछी करके वह मुस्करा रहा था। उसके गले की नसें फूली हुई थीं, जैसे हँसी रोक रहा हो। उस आदमी ने ऊपर की ओर उँगली उठाई। कुछ बुदबुदाया, फिर हँसा फिर माथे पर अपनी हथेली मारी।

चित्र : प्रशान्त सोनी

अपनी प्रशंसा सुनकर तीतर ने सर झुकाया। तीतर उसका हर इशारा समझ रहा था।

"चलो... अल्लाह ने सब सुन लिया।" सगीर ने कहा। उसने सर की टोपी ठीक की। झुककर सलाम किया और चला गया।

"तो?" सगीर मोहसिन की तरफ मुड़ा।

"कौन है?"

"कौन?"

"वही...जिसने खत लिखा है?"

मोहसिन उछलकर खड़ा हो गया।

"क्या...? कहाँ है?"

सगीर ने जेब से एक लिफाफा निकालकर मोहसिन को दिया। मोहसिन ने देखा। मोती जैसे सुगढ़ अक्षरों में लिखा था –

मोहसिन को मिले
सगीर बाशा की दुकान
आस्ताने औलिया जाने आलम

फिर मोहल्ला शहर। मोहसिन जिस तरह आया था उसी तरह वापस घर भागा। रास्ते में रिक्शों पर जा रहे, मिट्टी से बने रावण, मेघनाद, कुम्भकर्ण के पुतलों के टुकड़ों से टकराता बचा। सड़क पर लेटे एक जमूरे के ऊपर से कूद गया। हाँफता हुआ सीढ़ियाँ चढ़ा। अपने कमरे में जाकर खिड़की पर बैठ गया। कुछ देर साँसें लीं फिर लिफाफा खोला। चार पन्नों में लाजवन्ती का खत था। सलाखों से पीठ टिकाकर मोहसिन पढ़ने लगा।

प्रिय मोहसिन,

मैं पाँच दिन पहले सोन ख्वाब पहुँच गई। पूरा एक दिन का सफर था। स्टेशन पर हमें लेने मामा जी आए थे। ऊँटवाली गाड़ी में बैठकर हम घर गए। घर पहुँचकर मैं खूब सोई। तीन-चार दिनों तक सब जगह घूमी। सबसे बातें की। अब तुम्हें सब कुछ खत में लिख रही हूँ।

सोन ख्वाब बहुत छोटा रेलवे स्टेशन है। किसी खिलौने की तरह रखा हुआ दिखता है। मिट्टी का प्लेटफॉर्म है। उस पर कतार से सुर्ख गुलमोहर और हल्दी के रंगवाले अमलतास लगे हैं। अभी दोनों पर फूल नहीं हैं। पर जब दोनों फूलते होंगे तब सूर्ख और पीला प्लेटफॉर्म किसी पेंटिंग की तरह लगता होगा। इन पेड़ों के पीछे ढलवाँ छतवाला स्टेशन मास्टर का कमरा है। उस पर ढेर सारे कबूतर बैठे थे। यहाँ दिन में सिर्फ दो गाड़ियाँ रुकती हैं। एक आनेवालों के लिए, दूसरी जानेवालों के लिए। स्टेशन के बाहर निकलते ही गाँव शुरू हो जाता है। गाँव के बाद रेत के मैदान फिर दूसरा देश।

हमारा घर गाँव के बीच में है। छत से पूरा गाँव दिखता है। यहाँ सब कुछ "सोती सुन्दरी" कहानी की तरह हमेशा सोया रहता है। धूप...हवा...पेड़...पक्षी...समय तक। किसी को कभी कोई जल्दी नहीं होती। कोई तेज़ नहीं चलता। घड़ी नहीं देखता। घरों में ताला नहीं डालता। गाँव में खेत...कच्ची सड़क और कुछ कच्चे-पक्के मकान है। बड़ी चीज़ के नाम पर एक टूटे किले या गढ़ी की टूटी चारदीवारी है। इस पर लोग रंगे हुए कपड़े और चमड़े के टुकड़े सुखाते हैं। उनसे ढँकी चारदीवारी रंगबिरंगे फूलों की तरह रंगीन दिखती है। अरे...मैं बताना भूल...गई। यह गाँव रंगरेज़ों का है। मेरे मामा भी रंगरेज़ हैं। पास के बड़े शहर के कारखानों का कच्चा चमड़ा या कपड़ा यहाँ रंगने के लिए आता है। सैकड़ों सालों से गाँव के लोग रंगरेज़ी का काम करते हैं। वे हर तरह का रंग बना लेते हैं। हर चीज़ से बना लेते हैं। जब वे पुराने बचे हुए रंग का पानी गलियों में बिखेरते हैं तो गलियाँ रंगीन हो जाती हैं। कई बार शाम के समय बहुत सारे रंग हो जाते हैं। किले की चारदीवारी, पेड़ों के फूल, घरों के बाहर सूखते कपड़े...गलियों का रंगीन पानी, डूबते सूरज का आकाश सब मिलकर धरती से आसमान तक कई इन्द्रधनुष खिला देते हैं। मुझे लगता है पूरी धरती पर इतना रंगीन गाँव नहीं है। सिर्फ रंग...रंग और रंग हैं। सचमुच किसी सपने की तरह। इसीलिए इसे सोन ख्वाब कहते हैं। सोने का सपना। यह नाम कैसे पड़ा इसकी भी मज़ेदार कहानी है। सुनोगे?

एक बार जब स्वर्ग में सब कुछ शान्त और मौन था और रात अपने बीच में थी, तभी एक नन्हा, सुनहरा सपना अपनी माँ से अलग होकर भटक गया। भटकते हुए स्वर्ग से नीचे कूद पड़ा। धरती पर वह यहाँ इस जगह उतरा। उस समय जो भी नींद में उसे देख रहा था और देखनेवाले ने जो कुछ उस समय उसके अन्दर डाला था, वह सब ज़मीन पर ज़िन्दा हो गया। रंग, रेगिस्तान, किला, पक्षी, कविताएँ, स्टेशन, गुलमोहर, अमलतास सब कुछ। इसीलिए इसका नाम सोन ख्वाब पड़ा। अब मैं तुम्हें यहाँ की कुछ खास बातें बताती हूँ।

यहाँ दो पक्षी बहुत हैं। पहला कठफोड़ दूसरा थन चुसिया। कठफोड़ दिनभर पेड़ की लकड़ी पर चोंच से ठक-ठक करते हुए खोदते रहते हैं। कभी-कभी तो पेड़ के तने पर उनकी चोंच की आवाज़ बहुत तेज़ होती है। किसी हथौड़े की तरह। तुम्हें लगेगा नहीं कि कोई चिड़िया भी ऐसा कर सकती है। इनके सर सुन्दर कलगी से सजे होते हैं। लोग समझते हैं यह लकड़ी या पेड़ की छाल खाता है। ऐसा नहीं है। यह पेड़ के तने में छुपे कीड़े खाता है। चोंच से ठोंककर समझ लेता है कि अन्दर कीड़ा है या नहीं। फिर उसी जगह तने में सुराख करके उसे खा लेता है। लोग समझते हैं यह छेद करके लकड़ी खराब कर देता है। पर वह पेड़ को कीड़ों से बचाता है! दूसरी,

नुकीले पंख, पतले पैर और छोटी, चौड़ी चोंचवाली रंगीन चिड़िया है। यह सिर्फ रात को बाहर निकलती है।

दूध देनेवाले जानवरों के पेट के नीचे घूमती है। सैकड़ों सालों से लोग मानते हैं कि यह रात को चोरी से जानवरों के थन से उसका दूध पीती है। इसीलिए इसका नाम "थन चुसिया" पड़ गया है। पर सच में ऐसा नहीं है। यह रात में जानवरों के पास घूमनेवाले कीड़े खाकर उनकी परेशानी कम करती है। किसी चिड़िया पर इतना बड़ा और झूठा इल्ज़ाम लगाना बुरी बात है न? चाँदनी रात में साफ दिखता है कि ये गाय, बकरी, भेड़ या ऊँटनी के पेट के नीचे कूदती हैं तो रात में उड़नेवाले कीड़ों को खाने के लिए। ये कीड़े जैसे ही जानवरों के पेट या शरीर से नीचे उतरते हैं, ये उन्हें खा लेती है। इनके पर बहुत सुन्दर होते हैं। इन्हें कभी कोई नहीं मारता। लोग मानते हैं कि इनके अन्दर उन मरे हुए मनुष्यों की आत्माएँ रहती हैं जो धरती पर अपने किए पापों के कारण मुक्त नहीं हो पातीं। वहीं घूमती रहती हैं। यदि ये रात को किसी घर की छत या खिड़की पर चीखती हैं तो लोग इसे बड़ा अपशकुन मानते हैं। हमारे शहर में ये चिड़िया नहीं दिखती इसलिए तुम्हें इनके बारे में लिखा। तुम अपने दोस्तों को भी इनके बारे में बताना। इनकी सच्चाई के बारे में बताना। यह भी कि कोई चिड़िया कभी इंसानों का बुरा नहीं करती, सिर्फ इंसान चिड़ियों के साथ बुरा व्यवहार करता है।

पत्र लम्बा हो गया है। कहने को और भी बहुत-सी बातें हैं। पर अब आखरी बात लिख रही हूँ। गाँव की सीमा पर एक मुसाफिरखाना है। रेगिस्तान के पार दूसरे देश जाने के लिए या उस देश से रेगिस्तान पार करके यहाँ आने के लिए लम्बा सफर तय करना पड़ता है। यात्रियों के लिए इस गाँव में एक दो रात

रुकना ज़रूरी होता है। इसीलिए मुसाफिरखाना बना है। हर तरफ से हर तरह के लोग यहाँ आते हैं। एक दूसरे से मिलते हैं। अपने मुल्क, अपने लोग, अपनी ज़िन्दगी, अपने सुख-दुख के बारे में एक दूसरे को बताते हैं। साथ भोजन करते हैं। आराम करते हैं फिर काफिले के साथ यात्रा पर निकल जाते हैं। सोन ख्वाब के बहुत से लोग इनके साथ जाते हैं। इस तरह मिलने से यहाँ कहानियाँ बनती हैं, गीत बनते हैं, प्रार्थनाएँ बनती हैं। ये सब लोग इतनी छोटी और अलग-अलग जगहों के लोग होते हैं कि इनके पास कुछ भी बड़ा नहीं होता। इसलिए कोई बड़ा भगवान भी नहीं होता। इसीलिए इनकी ज़िन्दगी, इनकी बातें और प्रार्थनाएँ बिना भगवान की हैं। सोन ख्वाब में वहीं से आई हैं। मैंने पहली बार ऐसी प्रार्थनाएँ सुनी हैं जो पूरी दुनिया में कोई भी कर सकता हैं क्योंकि उनमें कोई भगवान नहीं है। कोई धर्म नहीं हैं। ये ज़िन्दगी से निकली हैं। इनमें धूप, रोशनी, सबके सुखी होने की प्रार्थनाएँ हैं। ऋतुओं की, पानी, बादलों, ऊँटनी के दूध, रेत के बिच्छू की प्रार्थनाएँ हैं। चिता के धुएँ की, हड्डी के न टूटने की, फसलों और बीमारियों की प्रार्थनाएँ हैं। कुछ तो बड़ी मज़ेदार हैं। सुनोगे? एक प्रार्थना छींक की है बेटी की विदा के समय माँ करती है –

ऐ प्यारी छींक
यहाँ मेरी बेटी को तू जितना चाहे सता ले
ससुराल में मत सताना
उसकी सास दुष्ट है और
पिया रेत के पार गया है।

खरबूज़े चुरानेवाले की भी प्रार्थना है -
हे चमकीले चाँद
अभी बाहर मत निकलो
जहाँ तक मैं खरबूज़े न काट लूँ
उसके बाद बाहर आओ या नहीं
तुम्हारी मर्ज़ी

है न मज़ेदार। मैंने ऐसी कुछ प्रार्थनाएँ लिख ली हैं। आकर सुनाऊँगी। खासतौर से एक गड़रिए की।

पत्र बहुत लम्बा हो गया है। अब खत्म करती हूँ। नानी तेज़ी से अच्छी हो रही हैं। तुम ठीक कह रहे थे। तुम्हारी अम्मी ने चादर में अपनी दुआएँ भी काढ़ दी थीं। अपनी अम्मी को मेरा प्रणाम कहना। छोटों को प्यार।

हुस्ना

पुनः हाँ, तुम पत्र मत लिखना। तुम्हारे पत्र से पहले मैं वापस पहुँच जाऊँगी। शायद दस दिन बाद। बता नहीं पाऊँगी पर आते ही नाचघर में आऊँगी। मेरा इन्तज़ार करना।

हुस्ना

मोहसिन ने पूरा पत्र दो बार पढ़कर जेब में रख लिया। कुछ देर आँखें बन्द किए बैठा रहा। फिर उठा। पलंग के नीचे से सन्दूक निकाला। खोला। सन्दूक के कोने में चित्र था, डिबिया थी, डिबिया में बालों की लट थी, हरसिंगार के

नौ फूल थे। मोहसिन ने उन्हीं के साथ पत्र रख दिया। सन्दूक वापस पलंग के नीचे ढकेल दिया। वापस खिड़की पर आया। बड़े बरगद के पीछे पूरा चाँद उगने लगा था। दरगाह पर लोग दुकानें समेट रहे थे। भिखारी रेज़गारी गिन रहे थे। भट्टीवाले ने चूल्हा बुझा दिया था। सपेरे ने पिटारी में नाग बन्दकर दिया था। रंगीन पत्थरों की मालाएँ पहने जोगी सर की जटाएँ बाँध रहा था। मज़ार के गुम्मदों और अँगूरों में कबूतर लौट आए थे।

मोहसिन पलंग पर लेट गया। कमरे के अन्दर चाँदनी आ गई थी। धीरे-धीरे चाँद ऊपर चढ़ने लगा। कमरे में चाँदनी भरने लगी। उसी तरह जैसे गुब्बारे में हवा भरती है। भरती हुई चाँदनी से कमरा फूलने लगा। मोहसिन की आँखे बन्द हो गईं। अचानक तेज़ आवाज़ के साथ कमरा फट गया। बाढ़ के पानी की तरह हरहराती चाँदनी सब ओर फैलने लगी। मोहसिन उस बाढ़ में बह गया। बहता रहा...बहता रहा...बहता रहा जब तक कि सोन ख्वाब गाँव नहीं पहुँच गया।

जारी....

कलमकारों से मुलाकात

(पेज 31 का शेष भाग)

इसके लिए चाहिए -

- हल्दी की गाँठ (हल्दी पाउडर भी इस्तेमाल कर सकते हैं पर इससे रंग जल्दी फीका पड़ सकता है।)
- पानी
- नमक
- एक सफेद सूती रुमाल

हल्दी की गाँठ के छोटे-छोटे टुकड़ों को स्टील के एक बरतन में लो। हल्दी की मात्रा से दुगना पानी इसमें मिला लो। इसे एक घण्टे तक उबालो। एक दूसरे बर्तन में 1 मात्रा नमक और 16 मात्रा पानी को मिलाकर रुमाल को भीगने दो। इसे भी एक घण्टे के लिए उबालना है। हल्दी को छान लो और पीले रंग के पानी को ठण्डा होने दो।

भीगे हुए रुमाल को हल्दी के पानी में भिगा दो। जब कपड़ा पूरी तरह से पीले रंग को खींच ले उसे निचोड़कर धूप में सुखा दो। लो तुम्हारा रुमाल रंग गया!

(नमक रंग को कपड़े में बनाए रखता है। आमतौर पर कलमकारी में फिटकरी का इस्तेमाल होता है, क्योंकि इससे रंग पक्का हो जाता है।)

एटी पर्सेंट

चन्द्रमोहन कुलकर्णी

"कुलकर्णी साब हैं क्या?" खास पुलसिया, भारी आवाज़ में यह पूछते-पूछते हवलदार गेट खोलकर अन्दर आए। मेरे भाई पुलिस में हैं। वे घर की ऊपरी मंज़िल पर रहते हैं। हवलदार शायद उन्हीं से मिलने आए होंगे यह सोचकर मैं सीढ़ी का रास्ता दिखाने लगा। तो वे बोले, नहीं, वो साब नहीं। आर्टिस कुलकर्णी।

मैंने कहा, "आइए!"

अन्दर आते-आते उन्होंने सरसरी निगाह से दीवार पर टँगे चित्रों को देखा और कुछ धमकाती-सी आवाज़ में बोले, "आप ही हैं आर्टिस?"

मैंने ऐसा क्या किया, जो पुलिस मेरे घर आई, यह सोचते हुए मैंने कहा, "जी हाँ! कहिए, क्या काम है?"

"आपसे निवेदन है कि आप सरकार की मदद करें। आपकी कला का फायदा समाज को मिलना चाहिए।"

मेरी समझ में बिलकुल भी नहीं आया कि हवलदार कहना क्या चाह रहे हैं। शायद वे मेरे मन की बात समझ गए। वे बोले, "चौकी चलना होगा। केच निकालना है।"

"केच?"

"हाँ, केच। इतने बड़े आर्टिस दिख रहे हो और केच नहीं पता?" हवलदार के स्वर में ज़रा नाराजगी थी। उन्हें लगा बात को बेवजह खींचा जा रहा है।

"केच क्या है? आप क्या कह रहे हो मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रहा है। और कौन-सी समाजसेवा?"

"अरे साब! आप तो पहले चौकी पर चलो। जो भी पूछना हो, हमारे साहब से पूछो।" हवलदार जी ने चेताया।

मैंने कहा, "आप चलिए, मैं आता हूँ।"

स्थान – पुलिस चौकी

हवलदार जी ने मुझे सब इंस्पेक्टर के सामने बिठाया। साहब गर्दन झुकाए एक बड़े-से रजिस्टर में पेन्सिल से कुछ निशान लगाने में व्यस्त थे। लगभग दस मिनट बाद उन्होंने गर्दन ऊँची कर मेरी ओर देखा। कॉन्स्टेबल को कुछ इशारा किया और बोले, "आते समय चाय बोल देना।" और फिर गर्दन झुकाकर रजिस्टर में मशगूल होते-होते मुझसे बोले, "बस, थोड़ा-सा बचा है।"

चाय आ गई। कॉन्स्टेबल बीस-बाइस साल के एक लड़के को अपने साथ लेकर आए थे। मुझे अन्दर के कमरे में ले जाया गया और अत्यन्त आदर के साथ एक मेज़ के सामने रखी कुर्सी पर बिठाया गया। थोड़ी देर बाद उस लड़के को भी मेरे सामने की प्लास्टिक की कुर्सी पर बैठने को कहा गया। हवलदार जी ने मेरे हाथ में एक ठेठ सरकारी पैड थमाया जिन पर खास तौर से पुलिस विभाग के कलर्क लिखते हैं। साथ में पीले रंग के करीब दस पन्ने भी दिए जिन पर एफ आई आर लिखी जाती है। हवलदार जी अब मेरे साथ विनम्रता से पेश आ रहे थे। उनके साहब ने मेरे पहुँचते ही चाय प्रस्तुत की, शायद उसका परिणाम था।

ये सब क्या चल रहा है, मेरी कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था।

हवलदार जी से पूछा तो कहानी कुछ यूँ पता चली –

वह लड़का पुलिस चौकी के पास ही मोबाईल की एक दुकान में काम करता है। सुबह उसने दुकान खोली ही थी कि एक चोर ने बहुत सारे मोबाईल चुरा लिए। चोर को उसने देखा, पर वह काउंटर से बाहर आता उतनी देर में चोर चकमा देकर भाग गया। उसने पुलिस में शिकायत दर्ज की थी और अब वह चोर का जैसा वर्णन बताएगा उसके अनुसार मुझे चित्र बनाना था। यह सब सुनकर मैंने कहा, "मैंने पहले कभी भी इस तरह से चित्र नहीं बनाया है और न अब बना पाऊँगा। कृपया मुझे माफ करें।"

यह सुनकर इंस्पेक्टर साहब मेरी प्रशंसा में जुट गए कि मैं कितना बढ़िया चित्रकार हूँ। मैंने किस तरह कितने सारे बड़े-बड़े और मुश्किल चित्र अपनी प्रतिभा से बनाए हैं। ये काम तो मेरे लिए बाएँ हाथ का खेल है आदि, आदि। बोलते हुए उनकी "भाषा" का लहज़ा कैसा था यह बताने की ज़रूरत नहीं है।

साथ ही उन्होंने यह भी जताया कि मुझे पुलिस की मदद करनी चाहिए क्योंकि पुलिस की मदद करना एक तरह से समाज की मदद करना ही है।

फिर उस लड़के ने वर्णन शुरू किया – दुबला-पतला, दबे रंग का था। चौकड़ी की कमीज़ पहने था और माथे पर बाईं तरफ से माँग निकाली थी।

चित्रः चन्द्रमोहन कुलकर्णी

उन्होंने बचे हुए बीस परसेंट के लिए मुझे माफ करते हुए सांत्वना भी दी कि अगली बार अस्सी के सौ प्रतिशत पक्के तौर पर हो जाएँगे।

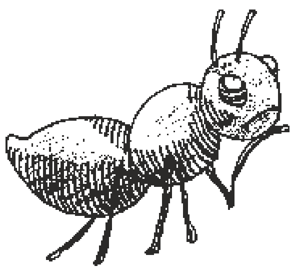

स्केच के लिए अनावश्यक ऐसी कुल पैंतालीस बातें उसने बताईं। आखिर में मैंने उसकी ओर ध्यान देना बन्द कर दिया और पीला कागज़, उसके नीचे सरकारी पैड, फीकी चलनेवाली "नटराज" पेंसिल के साथ, साहब के कहे अनुसार "अपनी प्रतिभा" का उपयोग करना शुरू कर दिया। मैंने उनसे कहा कि मैं घर से ड्रॉइंग का सामान ले आता हूँ। तो उनका जवाब तैयार था, "इस ज़रा-से काम के लिए क्या ज़रूरत है आपके कीमती सामान की?" आखिर मैंने उसी पेंसिल से काम शुरू किया।

जब बाल बन गए तो लड़का बोला, "माँग बाईं तरफ से।"

मैंने कहा, "बाईं तरफ से ही है।"

वह बोला, "ऐसे नहीं, अपनी बाईं तरफ से।"

......अब रबर की ज़रूरत थी.

हवलदार जी तो स्केच पर लट्टू थे। मेरे पीछे खड़े होकर, "सिक्स्टी परसेंट, सेवन्टी परसेंट, सेवन्टी फाइव परसेंट..." बोली लगा रहे थे। बालों की बात चलते ही, मेरे बिना कुछ कहे अपने मेज़ की दराज से एक छोटी पेटी निकाली और उसमें से बेहद सुन्दर, कोमल, सुगन्धित, गुलाबी रबर निकालकर मेरे सामने इस तरह पेश किया मानो कोई बहुत कीमती चीज़ पेश कर रहे हों। हवलदारजी के मोटे, रूखे हाथों में वह नाज़ुक रबर देखकर मुझे हवलदारजी पर ही दया आ गई। मैंने जल्दी से उसे अपने हाथ में लिया और ढेर सारा मिटा-मिटाकर किसी तरह स्केच पूरा किया।

लड़के ने वह पोट्रेट हाथ में लिया और हाथ को दूर से देखकर कहा, "हाँ साहब, यही था। सेवन्टी परसेंट दिख रहा है।" लम्बे समय से चल रहे स्केच प्रकरण से शायद वह ऊब गया था। हवलदारजी की परसेंटेज वाली बात अब मेरी समझ में आई।

तभी बड़ी देर से गायब सबइंस्पेक्टर साहब अचानक कहीं से प्रगट हुए और चित्र देखकर घोषणा की, बल्कि यह कहना चाहिए कि ज़रा रौब से बोले, "एटी परसेंट"

लड़का भी घबराकर बोला, "हाँ, साहब एटी परसेंट।"

साहब ने चित्र हाथ में लेकर उसे फिर से बहुत देर तक निहारा। बाहर के कमरे में ले जाकर कॉन्स्टेबल और हवलदार को दिखाया। उनसे चर्चा की। मुझे एक बार और चाय पिलाई और कहा, "बीच-बीच में इसी तरह समाजसेवा करते रहना चाहिए।" उसके बाद आत्ममुग्ध होकर बताने लगे कि "एटी परसेंट सही चित्र" के ज़रिए अब वे किस तरह आरोपी को निपटा देंगे। उन्होंने बचे हुए बीस परसेंट के लिए मुझे माफ करते हुए सांत्वना भी दी कि अगली बार अस्सी के सौ प्रतिशत पक्के तौर पर हो जाएँगे।

बाद में कॉन्स्टेबल को आदेश दिया कि उस चित्र की फोटोकॉपी शहर के सारे पुलिस स्टेशनों को भेज दी जाए। फिर मेरे प्रति आभार व्यक्त करते हुए अपनी बुलेट को हलकी किक मारकर वे ये जा, वो जा......

उस "एटी परसेंट सही चित्र" की सहायता से आरोपी पकड़ा गया या नह? उस लड़के को उसके मोबाईल मिले या नहीं? यह सारी जानकारी हासिल करने के लिए दुबारा पुलिस चौकी जाने की मेरी आज तक हिम्मत नहीं हुई। लेकिन यह जानने की तीव्र इच्छा ज़रूर है कि यदि आरोपी मिल गया हो तो देखूँ वह मेरे स्केच के कितने "परसेंट" नज़दीक है?

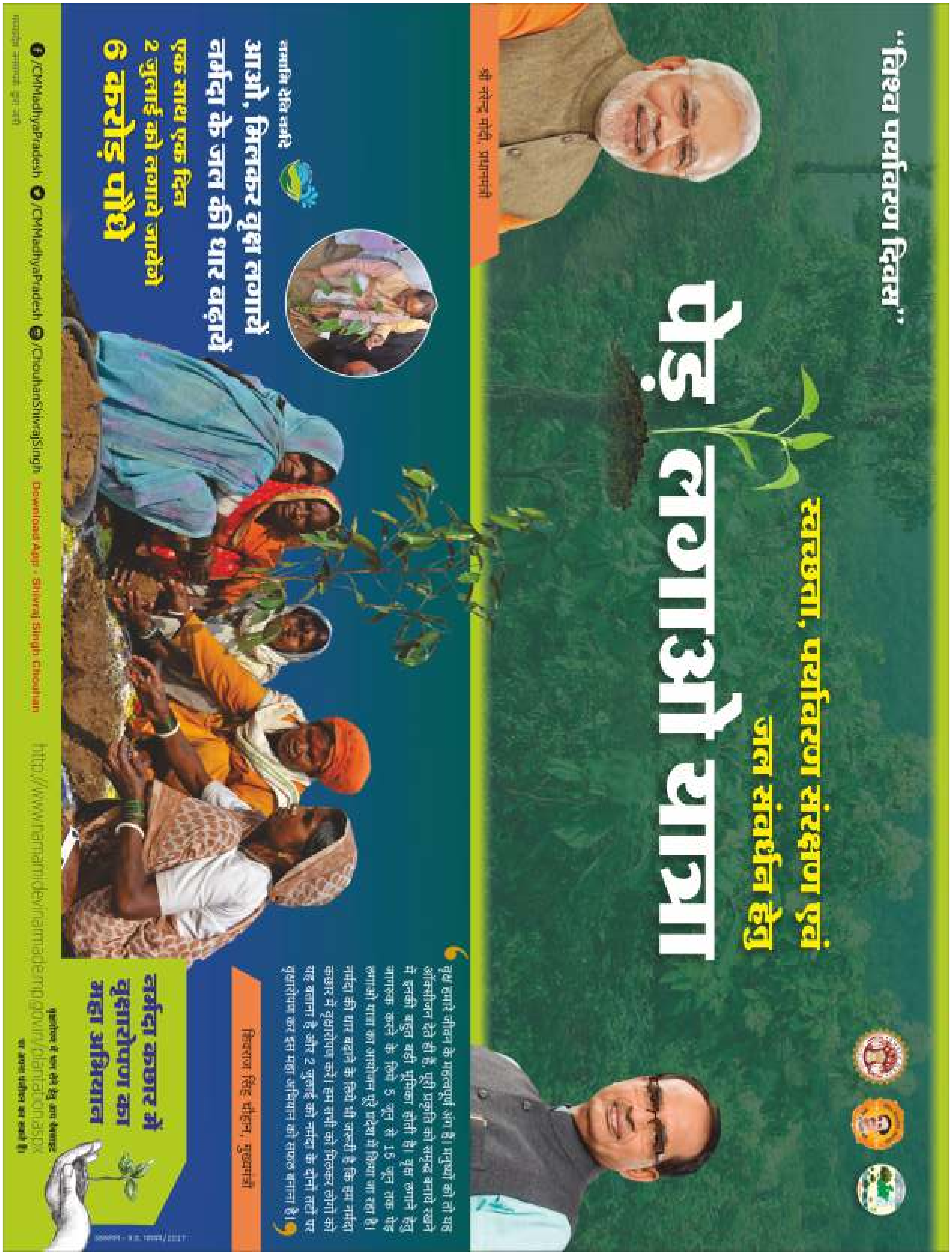

D-81257 दिनांक - 19-5-2017

और फिर एक दिन.....

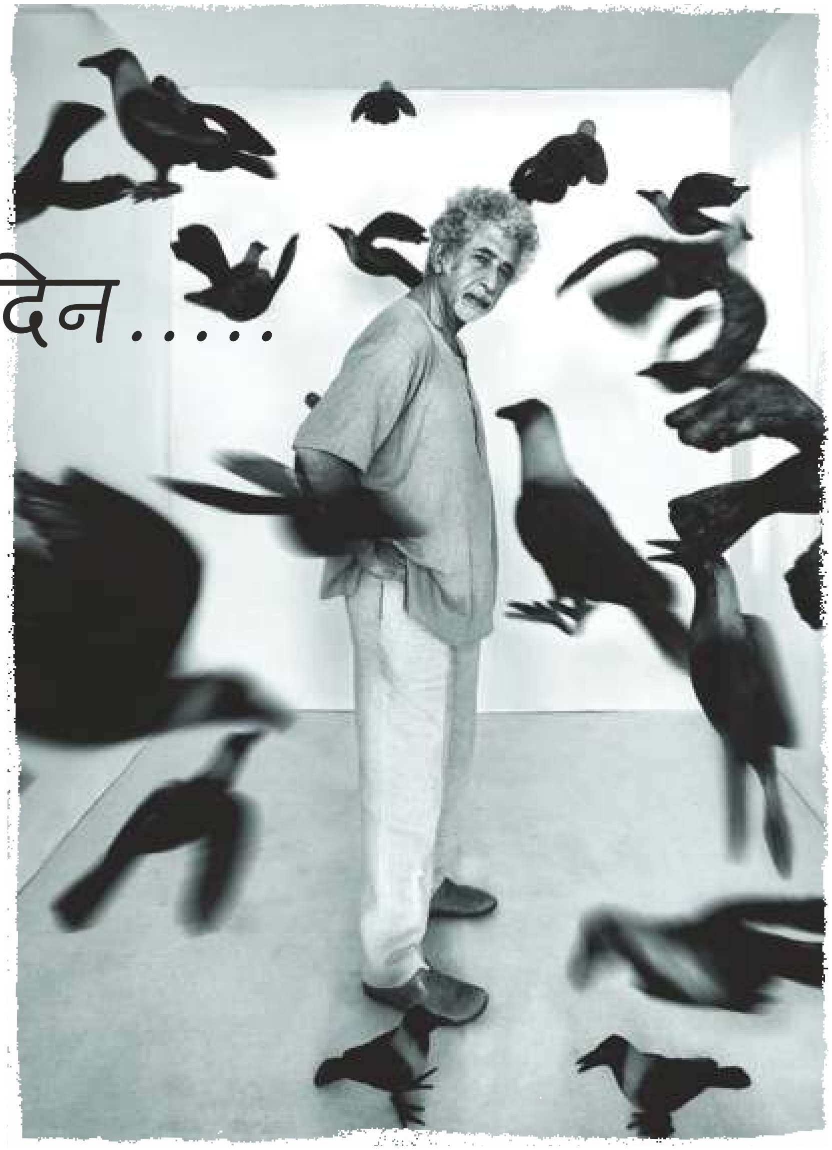

नसीरुद्दीन शाह की जीवनी की जीवनी "एण्ड देन वन डे" के कुछ सम्पादित अंश...

1.

यह शायद मेरी सबसे पहली याद है – मैं किसी की (वो मेरे माँ-पिता तो नहीं थे) गोद में बैठकर कोई नाच देख रहा हूँ। वो कोई नौटंकी या रामलीला जैसा कुछ था। खुले मंच में या तम्बुओं में जैसे तमाशा होता है, वैसा ही कुछ। मंच पर एकदम लिपे-पुते मुँहवाला नाचता वो आदमी मेरे दिलो-दिमाग पर छा गया। मैं जैसे होशहवास गँवा के उसे देखता रहा। बिना पलक झपकाए। वो ऊँचे मंच पर नाच रहा था। उसका चेहरा चमक रहा था। उसकी आँखें तैश खाए साँपों की तरह फुँफकार रही थीं। वो जब-जब अपने शरीर को उमेठे, आँखों को ऊपर-नीचे नचाते हुए मेरी तरफ देखता तो मेरे शरीर में बिजली-सी दौड़ जाती। और जाने क्यों वो बार-बार मुझे देख रहा था। इसके अलावा मुझे उस दिन का कुछ भी याद नहीं है। दो साल का था तब मैं। कभी-कभी तो लगता है मैंने ऐसा कुछ भी नहीं देखा। यह बस मेरे दिमाग का फितूर है। पर अगर यह फितूर है तो भी इसका असर मेरे साथ घटे किसी सच की तरह ही हुआ। वो कोई सर्कस भी हो सकता है और वो आदमी कोई जोकर। पर उस वक्त मुझे लगा जैसे वो आसमान छू रहा है। हो सकता है कि तब मैं बहुत छोटा था इसीलिए वो मुझे इतना बड़ा लगा। पर यह तस्वीर मेरे ज़ेहन में हमेशा के लिए चिपक गई है। वो जो भी आदमी था उसने मुझे मेरे जीवन की सबसे कीमती चीज़ दे दी – आश्चर्य लोक में झाँकने की कुव्वत। मैं एक ऐसे डर से मिला जो अपनी ओर खींचता था, जिसे छूने का मन करता था। मैं वहाँ होना चाहता था, उस के पास ऊपर मंच पर – हमेशा के लिए....

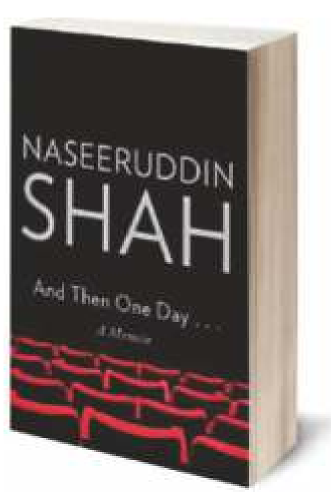

एण्ड देन वन डे
लेखक – नसीरुद्दीन शाह
प्रकाशक – पेंग्विन बुक्स

यह किताब ऑनलाइन भी मँगाई जा सकती है।

2

उस साल मेरे और मेरे भाई ज़मीर का दाखिला सेंट मेरी कॉन्वेंट स्कूल में नर्सरी में हुआ था।

इसी साल मैंने पहली बार सेम कॉन्सर्ट हॉल में एक नाटक देखा – मिस्टर फिक्सिट। उस नाटक को भूले हुए ज़माना बीत गया। पर उसे देखते हुए जो एकमात्र इच्छा मेरे मन में हुई वो थी मंच पर उन लोगों के साथ होना। जब मंच पर वो बड़ी-सी बग्घी सरकती हुई आई (बाद में मझे पता चला कि वो पहियों पर प्लाइवुड का बना ढाँचा था) मैं उसी आश्चर्यलोक में चला गया जहाँ उस 100 फीट ऊँचे मंच पर उस आदमी को नाचते देखकर पहुँचा था। उस दिन से मेरा इस बात पर पक्का यकीन हो गया कि इस दुनिया में जो भी जादू होता है मंच पर होता है। फिल्में आपको अपने मोह में बाँध लेंगी, वो सब कुछ परोसकर आपके सामने रख देंगी, ऐसा मायाजाल बुनेंगी कि आप एक दूसरी दुनिया में पहुँचकर सपने देखने लगेंगे। पर थिएटर आपको ऐसी दुनिया में ले जाता है जहाँ आपकी कल्पनाएँ अँगड़ाइयाँ लेने लगती हैं, आपकी सूझबूझ बनी रहती है। इससे आपकी खुशी कई गुना बढ़ जाती है। थिएटर ही वो जगह है जहाँ अदाकार और दर्शक के बीच एक रिश्ता बनता है, ऊर्जा की आवाजाही होती है। "एक अदाकार – एक दर्शक", थिएटर को इससे बेहतर कैसे समझा जा सकता है!

वो जो भी आदमी था उसने मुझे मेरे जीवन की सबसे बेशकीमती चीज़ मुझे दे दी - आश्चर्य लोक में विचरने की सौगात।

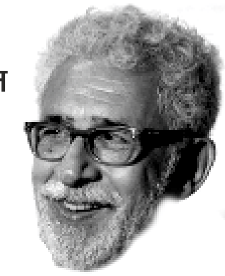

3

सेंट जोसेफ में बाबा ने मेरा दाखिला यह सोच के कराया कि यहाँ मैं थोड़ा होशियार, समझदार, ज़िम्मेवार बनूँगा। पर मेरी समझ यहाँ शीशे-सी साफ हो गई कि फिल्में देखने से मज़ेदार और कोई काम नहीं। मैं यहाँ या तो फिल्में देख रहा होता या अकेले में ऐसा स्वांग रच रहा होता जैसे खुद फिल्म में हूँ। मुझे खुद में कुछ नहीं दिखता – कोई खूबी नहीं, सुन्दरता नहीं, अकल नहीं, दोस्त नहीं। खुद से बिलकुल भी सन्तुष्ट नहीं था मैं। मैं एक्टिंग को किसी दूसरे की तरह जीने का एक तरीका मानता था। मैं हमेशा अकेले में एक्टिंग करता। कभी किसी को बताया भी नहीं कि मैं ऐसा करता हूँ। पर एक्टिंग का कीड़ा मेरे अन्दर फैलता-फूलता गया। आजतक सोचता हूँ कि क्या असल ज़िन्दगी से तालमेल नहीं बैठा पानेवाले ही एक्टिंग की ओर खिंचे जाते हैं। हमेशा कोई और होने की इच्छा अजीब नहीं लगती! मुझे लगता है कि अपनी शुरुआती ज़िन्दगी में अगर कोई खुद को नाकारा मान बैठे तो वो किसी और के नाम पर जीने का बहाना ढूँढने लगता है।

4

आठवीं में हमारी क्लास में 50 बच्चे थे। और क्लास में मेरा नम्बर 50वाँ था। क्लास में मुझे टीचर की आवाज़ के उतार-चढ़ाव (आरोह-अवरोह) पर ध्यान देना, उनके हावभाव देखना, उनके कपड़े पहनने का सलीका देखना, उनको ब्लैकबोर्ड साफ करते देखना इतना दिलचस्प लगता कि वो जो पढ़ा रहे होते उस पर ध्यान ही नहीं जाता। अँग्रेज़ी में मेरे खूब नम्बर आते। गणित, भौतिकी, रसायन शास्त्र में मेरा डिब्बा गोल रहता। एक बात मुझे कभी समझ नहीं आई कि मेरी किसी टीचर को यह जानने में दिलचस्पी क्यों नहीं हुई कि जिस बच्चे के अँग्रेज़ी साहित्य और गद्य

लेखन में सबसे ज़्यादा नम्बर आते हैं वो व्याकरण में फेल क्यों हो जाता है।

5

नम्बर कम आते थे इसलिए मुझे एकदम नाकारा समझ लिया गया था। जो कुछ नहीं कर सकता था। कुछ भी नहीं, एक्टिंग तो बिलकुल नहीं। हमारे स्कूल में नाटक खूब खेले जाते थे। देखने को

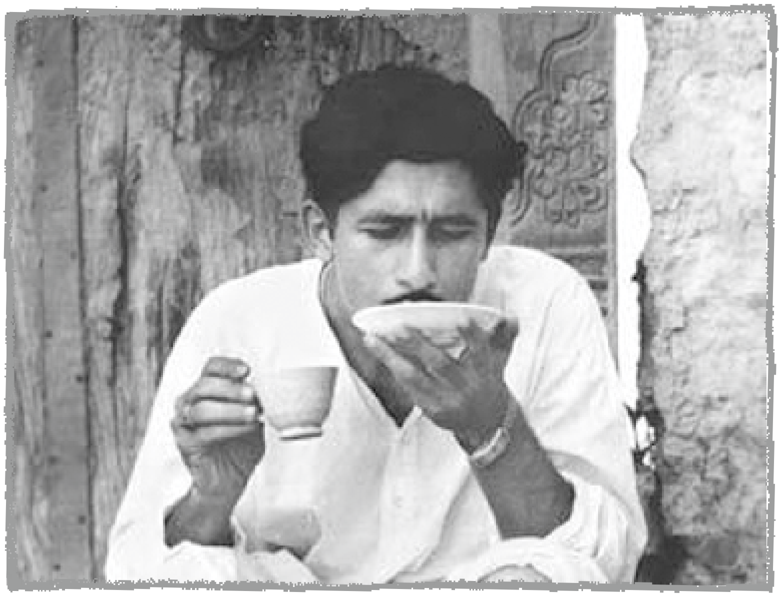

भी मिलते थे। पर मुझे लेने की बात तो कोई सोच भी नहीं सकता था। टीचरों के पसन्दीदा बच्चों को ही बार-बार मौके मिलते। मुझे तो नज़रअन्दाज़ किए जाने का भी "सुख" नहीं मिला।

फिर एक नाटक *मैट्रिमोनियल एजेंसी* में मुझे एक छोटा-सा रोल मिला। तब मैं आठवीं में था। मेरे हिस्से एक लाइन का संवाद आया। मुझे एक ऐसे व्यक्ति का रोल मिला जो मैट्रिमोनियल एजेंसी (शादियाँ कराने वाली एजेंसी) को पालतू जानवरों की दुकान समझ बैठता है। मेरा डायलॉग था – मुझे वो चाहिए जो सारा दिन भौंकता रहे, लोगों की नाक काट ले और मेरे घर को बाहरवालों से सुरक्षित रखे।

रिहर्सल में मुझसे कहा जाता – साफ और ऊँचा बोलो ताकि सब सुन सकें। इसे सुनकर मुझे लगता जैसे मैं गहरे अँधेरे में चला गया हूँ। मुझे वैसा ही महसूस होता जैसे तब जब मैं पाँच साल का था। मैं हकलाता था और इससे छुटकारा पाने के तरीके खोजता था। इनमें से एक तरीका था जल्दी-जल्दी बोलना। मेरी कोशिश रहती कि हकलाहट छूटे इससे पहले ही मैं अपनी बात कह दूँ। इससे तेज़ी से बोलना मेरी आदत बन गई।

मैंने महसूस किया था कि जब कोई आसपास नहीं होता तो मैं बढ़िया उतार-चढ़ाव के साथ संवाद बोल लेता था। पर कोई आसपास होता तो मुझे मुश्किल होती। बार-बार "बोलो, साफ-साफ, नाक से नहीं.. इतनी तेज़ नहीं..." सुन-सुनकर और लगातार प्रैक्टिस के बाद मैं इतने सारे लोगों के सामने बोल पाया। मेरे लिए तो जैसे आसमान खुल गया हो।

नाटकवाले दिन मैं परदे के पीछे खड़ा था। मैं इस बात के मज़े ले रहा था कि परदे के सामने बैठे लोग सोच रहे होंगे कि परदे के पीछे क्या हो रहा होगा। (जैसे अब तक मैं सोचता आया था)। अचानक परदा खुल गया। ज़िन्दगी में पहली बार मैं मंच पर था। तेज़ रोशनी में मेरी आँखें चौंधिया रही थीं। फिर मुझे पाँव के नीचे लकड़ी का मंच महसूस हुआ। मैंने गहरी साँस ली। झिलमिलाते अँधेरे में धीरे-धीरे सिरों के पहचाने आकार नज़र आने लगे। वहाँ बैठे लोग मुझे देखने आए थे, मुझे सुनने, उन्हें मुझसे उम्मीद है, मैं जैसा हूँ उन्हें स्वीकार्य हूँ – यह सोचते ही मेरा डर गायब हो गया।

तभी मैं बोल पड़ा – ऊँचा, साफ, स्पष्ट ...और वो सब हँस दिए। उन्होंने मुझे सुना था। मुझ तक अपना जवाब पहुँचाया था। उस क्षण मैंने जान लिया कि इस पूरे ब्रह्माण्ड में उस पल आपको चाहनेवाला दर्शक के सिवा और कोई भी नहीं।

इस एक घटना का असर इस कदर हुआ कि स्कूल में मेरे अच्छे नम्बर आने लगे। मेरा खुद पर यकीन क्या आया सारे डर, झिझक रफूचक्कर हो गए।

अनुवादः शशि सबलोक

उल्टे पाँव लौटना

चींटियाँ मज़ेदार जीव हैं। वे सीधे चलते हुए, उल्टे चलते हुए और यहाँ तक कि बाजू में चलते हुए भी घर का रास्ता नहीं भूलतीं। यह बात *करंट बायोलॉजी* नामक शोध पत्रिका में सेबेस्टियन श्वार्ज़ और उनके साथियों ने उजागर की है।

चींटियाँ भोजन की तलाश में दूर-दूर तक भटकती हैं। दूर-दूर तक मतलब चींटी की अपनी साइज़ के हिसाब से दूर-दूर तक। भोजन मिलने पर वे उसे घर लाती हैं। भोजन का टुकड़ा छोटा हो तो वे उसे धकेलते हुए ले जाती हैं। ऐसे में उन्हें रास्ता दिखता रहता है। मगर जब भोजन का टुकड़ा बड़ा हो तो वे उसे धकेलने की बजाय मुँह से पकड़कर खींचती हैं। यानी वे उल्टी चलती हैं। उन्हें इस दौरान आगे का रास्ता नहीं दिख पाता। और न ही रास्ते को पहचानने में सहायक कोई निशान। तब वे सही रास्ते पर कैसे चल पाती हैं?

श्वार्ज़ और उनके साथियों ने स्पेन की कुछ रेगिस्तानी चींटियों के साथ प्रयोग किए। सबसे पहले तो उन्होंने चींटियों की एक चालू बाम्बी खोज निकाली। फिर उसके आसपास इस तरह रोड़े बिछा दिए कि चींटियाँ एक खास रास्ते पर चलने को मजबूर हो गईं। जब चींटियाँ इस भूलभुलैया से परिचित हो गईं तो शोधकर्ता उन्हें भोजन का एक टुकड़ा पकड़ा देते। और उन्हें उठाकर नई जगह पर रख देते। यह जगह ऐसी चुनी जाती थी कि चींटी को घर की ओर जाने के लिए पहले समकोण पर मुड़ना पड़े।

शोधकर्ताओं ने देखा कि जिन चींटियों को छोटा टुकड़ा दिया गया, उन्हें तो कोई परेशानी नहीं हुई; वे फौरन मुड़कर सीधा रास्ता पकड़ लेती थीं। शायद इसलिए कि वे सीधे चल रही होती थीं और रास्ता दिखता रहता था।

मगर जिन चींटियों को उल्टा चलना पड़ा, वे थोड़ा ठिठक जाती थीं। भोजन का टुकड़ा छोड़कर वे पहले आसपास का मुआयना करतीं। जैसे उनके अन्दर रास्ते का कोई नक्शा हो। जैसे वे इसी अन्दरूनी नक्शे को नए सिरे से व्यवस्थित करती थीं। फिर वापिस मुड़कर भोजन का टुकड़ा पकड़तीं। सही दिशा में उल्टे कदमों से चल

(शेष भाग पेज 51 पर)

जब पेंसिल की नोक खतम होगी

तभी महराज आएँगे और तब होटल खुलेगी

विनोद कुमार शुक्ल

बोलू और कूना को महराज का जाना दिखा नहीं। वे महराज का जाना देखना चाहते थे। वे वहीं खड़े रहे थे। बोलू के हाथ में छिली पेंसिल थी। कूना को याद आया – महराज ने कागज़ में नाम लिखने के लिए कहा था और उसने सुन्दर अक्षरों में अपना नाम लिखा भी था।

कूना ने कहा, "बोलू, पेंसिल छीलने के बाद महराज कागज़ पर अपना नाम लिखने के लिए कहते हैं। मैंने लिखा था। तुमको भी लिखना पड़ेगा। कुछ हिसाब शायद करते हों। अपना नाम लिखना रसीद हो।"

"लिखना पड़ेगा।" तभी महराज की आवाज़ आई। वे दोनों पलटे। महराज टेबिल के सामने उसी तरह बैठे थे जैसे कहीं गए नहीं थे। "बोलू! इस कागज़ पर अपना नाम लिख दो। सुन्दर अक्षरों में लिखना। जब भी लिखना तो सुन्दर अक्षरों में।" महराज खरगोश जैसे दो दाँतों से मुस्कराए।

"जी महराज!" कहकर बोलू टेबिल तक गया। जैसे कूद कर गया। उसने सुन्दर अक्षरों में "बोलू" लिखा।

फिर बोलू ने कहा, "महराजजी, आप तो चले गए थे! कँधारू भी दुकान बन्द करने लगा था।"

"मैं गया नहीं था, तुमको दिखा नहीं, इसका मतलब यह तो नहीं कि मैं चला गया। और कँधारू आगे का काम पहले करता है।"

"महराज जी! हम अब घर जाना चाहते हैं, जाएँ?" बोलू ने मुड़ते हुए कहा।

महराज जी ने कहा, "मुझे दूर जाना है। अच्छा हो यदि हम सब एक साथ घर पहुँचें।"

इसके बाद महराज जी ने बोलू और कूना को एक-एक पेंसिल टहनी और दी।

कूना ने कहा, "एक टहनी तो आपने पहले दे दी है। जब यह खतम हो जाएगी तो दूसरी लूँगी।"

चित्रः चन्द्रमोहन कुलकर्णी

महराज ने बोलू को भी एक टहनी दी। कहा, "रख लो। मैं कुछ दिनों के लिए बाहर जा रहा हूँ। ज़रूरत पड़ेगी।"

"कब आएँगे?" कुछ आगे बढ़कर बोलू ने पूछा।

कँधारू को तब लगा था बोलू पीछे हटेगा, तो कँधारू पीछे हट गया था। बोलू के बोलकर इधर-उधर चलने से बचने के लिए कँधारू कुछ दूर जाकर फिर खड़ा हो गया।

बाबूलाल महराज ने कहा, "जब तुम्हारी पेंसिल की नोक लिखने से खतम हो जाएगी तब आऊँगा।"

कूना ने कहा, "तब मैं जल्दी-जल्दी बहुत सारा लिखूँगी। इससे आप जल्दी आ जाएँगे।"

"लेकिन, जब तक मैं नहीं आऊँगा तुम्हारी पेंसिल की नोक तो खतम नहीं होगी।" महराजजी ने मुस्कराकर कहा।

बोलू ने कहा, "हम दोनों मिलकर बारी-बारी से एक ही पेंसिल से लिखेंगे तो नोक और जल्दी खतम हो जाएगी।"

महराज हँसने लगे। कहा, "मैं जिस तरफ जा रहा हूँ। उस तरफ की बहुत दूरी है। पेंसिल भी देर तक चलेगी। वह मेरे जाते और मेरे लौटते तक चलेगी।"

"क्या! आपके चलने से पेंसिल की नोक खतम होगी? और पेंसिल के चलने से पेंसिल की नोक खतम नहीं होगी?" कह कर बोलू चला।

यह दृश्य मज़ेदार था। वह पेंसिल के चलने की नकल कर रहा था। जैसे वह खुद पेंसिल है। पर चलकर क्या लिखा? वह चलते हुए जो बोले उसे लिखा हुआ समझो और जो सुनो उसे लिखा हुआ पढ़ा समझो।

महराज जी ने कहा, "मेरे लौटने से ही पेंसिल की नोक खतम होगी। तभी होटल खुलेगी और तब तुम लोग पेंसिल छिलवाने मेरे पास आओगे। अच्छा चलो एक खेल से इसका प्रयोग करते हैं। कूना! तुम केवल लिखो, 'महराजजी'। जब लिखना शुरू करना तो मुझे बता देना, तो मैं चलना शुरू कर दूँगा। बहुत तेज़ चलता हूँ। क्षितिज के पार चला जाऊँगा। और बोलू! तुम मुझको जाते हुए देखना। क्योंकि कूना लिखेगी वह मुझे जाते हुए कैसे देखेगी?"

"जल्दी से तैयार हो जाएँ!" कूना ने कहा। और उसने

और आश्चर्य की बात थी महराज जी तेज़ी से क्षितिज तक पहुँच भी गए। बोलू देख रहा था कि क्षण भर में महराज जी क्षितिज से आगे जाकर ओझल भी हो गए।

"महराजजी" तेज़ी से लिखना शुरू किया।

और आश्चर्य की बात थी महराज जी तेज़ी से क्षितिज तक पहुँच भी गए। बोलू देख रहा था कि क्षण भर में महराजजी क्षितिज से आगे जाकर ओझल भी हो गए।

तभी कूना ने लिखना बन्द कर चिल्लाकर कहा, "मैंने लिख लिया।"

और तभी महराज की आवाज़ आई, "मैं जाकर लौट आया।"

दोनों ने पीछे मुड़कर देखा महराज कुर्सी पर बैठे हैं और कूना और बोलू का मुँह आश्चर्य से खुला था।

"अब पेंसिल की नोक को देखो। मैं पलक झपकते ही दूर जाकर लौट आया। और लौटा तो नोक खतम हो गई।" दोनों ने देखा कि केवल "महराजजी" लिखने भर से पेंसिल की नोक खतम हो चुकी थी।

तब महराजजी ने कहा, "यदि मैं महीनों न लौटूँ और तुम लोग महीनों लिखते रहो तो नोक थोड़ी भी नहीं घिसेगी। पत्थर से नोक तोड़ने की कोशिश करोगे जिससे मैं जल्दी लौट आऊँ तो नोक नहीं टूट सकेगी। मुझे जब किसी की पेंसिल छीलना होता है यानी इसकी जल्दी होती है तब मैं लौट आता हूँ। हाँ! अगर तुम खराब अक्षर लिखोगी, टेढ़े-मेढ़े अक्षर, तो मैं भटक जाऊँगा। किसी गड्ढे में गिर जाऊँ तो लौटने में देर हो जाएगी।"

बोलू ने कूना को बताया था कि महराजजी उसे दूर तक जाते दिखे थे। महराजजी जानबूझकर मैदान की तरफ से गए ताकि वे क्षितिज तक जाते दिखें। फिर उससे आगे जाकर ओझल हो गए।

कूना को लग रहा था – उसने तो महराज को जाते

नहीं देखा। वह अपने देखने के लिए महराज जी से उसी तरह क्षितिज के उस पार जाने को कहेगी। और कागज़ को देखे बिना कागज़ पर "महराज" लिखेगी। महराज तो वह आँख बन्दकर भी लिख सकती है।

और बोलू सोच रहा था कि वह महराज बोलकर महराज के साथ चलना शुरू कर दे तो क्या वह उनके साथ-साथ रह सकेगा या आगे भी निकल सकेगा!

बहुत दूर था
महराज का घर
कूना, बोलू का था पास
अपने घरों को चले थे
सब एक समय और
पहुँचे भी सब थे
अपने घर एक समय

और तब दोनों इसी तरह बहुत-सी बातें सोचते हुए लौट रहे थे। कुछ दूर निकल आने के बाद दोनों ने घूमकर देखा कि होटल दिख रही है या नहीं। होटल नहीं दिखी। यानी होटल बन्द हो चुकी थी। उन्होंने चारों तरफ देखा बल्कि ऊपर आकाश की तरफ भी कि कहीं होटल दिख जाए, किसी बदले हुए स्थान, परिवेश में। कभी उसी जगह पर दिखे और वही जगह कुछ बदल जाए। क्या ऐसा हो सकता है कि बदले हुए परिवेश में होटल के पड़ोस में बोलू का घर दिखने लगे। और बोलू के घर के पास कूना का पड़ोस न हो।

बात करते-करते चलते कूना ने बोलू से कहा, "महराज ने कहा था सब घर साथ-साथ पहुँचेंगे। पर हम तो रुकते, और धीरे-धीरे भी चलते हैं।"

बोलू ने कहा, "अच्छा चलो। भागकर चलते हैं। महराज को भी भागना पड़ेगा। उनका घर तो दूर है। और अपना घर पास। हो सकता है वे पहले से भाग रहे हों।"

बोलू और कूना पड़ोसी थे। वे साथ घर पहुँचते। महराज तो पड़ोसी नहीं। पता नहीं कहाँ? कितनी दूर रहते हैं?

दूरी को गति से नापना चाहिए, लम्बाई से नहीं। वही जगह किसी के लिए 20 मिनट दूर होगी तो किसी के लिए

15 मिनट। एक निश्चित जगह अलग-अलग लोगों के लिए अलग-अलग दूरी पर।

घर आ गया। कूना ने कहा, "अपन बाहर ही खेलते हैं। महराज तो पहुँचे नहीं होंगे!"

"पर क्या पता महराज का घर पहुँचना ज़रूरी हो! हमारे घर जाने के इन्तज़ार में वे अपने घर के सामने। खड़े होंगे ऐसा करते हैं हम सब अपने-अपने घर एक साथ पहुँचें।" दोनों घर चले गए।

बाबूलाल होटल से निकलने से पहले बोलू ने बाबा के सामने चढ़े फूलों पर ध्यान दिया था। हरश्रृंगार और चम्पा के फूल थे। दोनों फूल अपनी ताज़गी में झर जाते हैं कि हमें तोड़ो नहीं हमें धरती से बीन लो। यही महराज ने किया होगा! बीनकर बाबा को फूल चढ़ाया होगा। जब ऊँचाई से ये फूल झरते हैं हवा में चकरी की तरह घूमते हुए, तब मज़ा आता है – फूलों को झरने में भी और उन्हें झरते हुए देखने से भी।

क्या देखू को होटल, खुलने के पहले से दिख जाती होगी कि होटल खुल गई? देखू पास में दिखनेवाले दृश्य या चीज़ों को दूर से देख लेता था, जिसे दूसरे बाद में और पास जाकर देख पाते, देखू दूर से देखकर बता देता कि अभी तो होटल बन्द है और तेन्दू के पेड़ में एक पल्ले का साँकल लगा हुआ है। (जारी...)

एक समय की बात है

चित्रः सागर अरणकल्ले

गीत चतुर्वेदी

एक बीज था। उसके पास एक धरती थी। दोनों प्रेम करते थे। बीज, धरती की गोद में लोटपोट होता। वो हमेशा वहीं बने रहना चाहता था। धरती उसे बाँहों में बाँधकर रखती थी और बार-बार उससे उग जाने को कहती। बीज अनमना था। धरती आवेग में थी। एक दिन बरसात हो गई। बीज अपने उगने को और टाल नहीं सका। अनमना उगा और एक दिन उगने में रम गया। खूब उगा और बहुत ऊँचा पहुँच गया। धरती उगती नहीं, फैलती है। पेड़ कितना भी फैल जाए, उसकी उगन उसकी पहचान होती है।

दोनों बहुत दूर हो गए। कहने को तो जड़ें धरती में रहीं, लेकिन जड़ को किसने पेड़ माना है आज तक? पेड़ तो वह है जो धरती से दूर हुआ। उससे चिपका रहता तो घास होता।

पेड़ वापस एक बीज बनना चाहता है। पेड़ को दुख है कि अब वह वापस कभी वही एक बीज नहीं बन पाएगा। हाँ, हज़ारों बीजों में बदल जाएगा। धरती ठीक उसी बीज का स्पर्श कभी नहीं पा सकेगी। पेड़ उसके लिए महज़ एक परछाईं होगा।

मैं पेड़ के बहुत करीब जाता हूँ और उससे कहता हूँ, "सुनो, तुम अब भी एक बीज हो। तुम अभी भी उगे नहीं हो। तुम सिर्फ धरती की कल्पना हो।"

सारे पेड़ कल्पना में उगते हैं। स्मृति में वे हमेशा बीज होते हैं।

(पर) लोककथा का एक अंश

चित्र : आशिका हरभजंका

उल्टी चलती चींटियों को दिशा ज्ञान

(पेज 45 का शेष भाग)

पड़तीं। शोधकर्ताओं का विचार था कि वे दिशा ज्ञान के लिए सूरज की स्थिति का सहारा भी लेती हैं। इसकी जाँच के लिए उन्होंने ऐसे दर्पण लगा दिए कि सूरज आसमान की विपरीत दिशा में नज़र आने लगता था। ऐसा करने पर चींटियाँ सचमुच विपरीत दिशा में आगे बढ़ गईं।

अपने अध्ययन के आधार पर शोधकर्ताओं को लगता है कि घर की दिशा जानने के लिए चींटियाँ कई संकेतों को जोड़कर उपयोग करती हैं – स्थानीय चिन्ह, सूरज की स्थिति और स्वयं अपनी स्थिति। यह व्यवहार काफी रोचक है क्योंकि इसके लिए तीन तरह की स्मृतियों की ज़रूरत है: रास्ते की स्मृति, नई दिशा की स्मृति और भोजन जहाँ छोड़ा था, उसकी स्मृति। तो चींटियाँ उम्दा यायावर हैं।

चींटियाँ अकसर ही दिख जाती हैं। तुम उनकी कई आदतों के बारे में जानते होगे! क्या तुमने चींटी के स्वभाव और हुनर को जानने के लिए कोई प्रयोग किया है, नज़र रखी है? चींटियों के बारे में एक दिलचस्प लेख चकमक के सितम्बर 2011 के अंक में प्रकाशित हुआ है। यह अंक एकलव्य की बेबसाइट पर भी उपलब्ध है। बहरहाल, ये जो लेख आपने पढ़ा वह स्रोत फीचर्स से लिया गया है।

बोलीरंगोली

बोली-रंगोली के इस बार के चित्र
बहुत कमज़ोर लगे।
ड्राइंग छोड़ो... वे कविता से भी भटके हैं।
शायद तुम ऊब गए हो
या थक गए हो।
तो क्यों न इस कॉलम को बंद कर दें?
तुम्हारे अगले अंक के चित्र तय करेंगे
कि हम बोलीरंगोली चलाते रहें
या बंद कर दें।
- चकमक

स्मितकबीर, सात साल,
मुम्बई

राशि जैन, 13 साल,
बाल भवन
जबलपुर

जून-जुलाई की कविता थी

एक मच्छर मिला,
गुनगुनाता हुआ
कान के पास
सीटी बजाता हुआ
बड़ा मनचला
एक मच्छर मिला
दोनों हाथों से जब
मारना चाहा तो
एक ताली बजी
मनचला खुश हुआ
नाचने लग गया
ताता थई, ताता थई
ताता थई, ताता थई
बड़ा मनचला
एक मच्छर मिला।

- गुलज़ार

शीतल, 11 साल,
वन्डररूम बाल पुस्तकाल, नई दिल्ली

करन कुमार, छठी,
बिहार बाल भवन किलकारी,
पटना

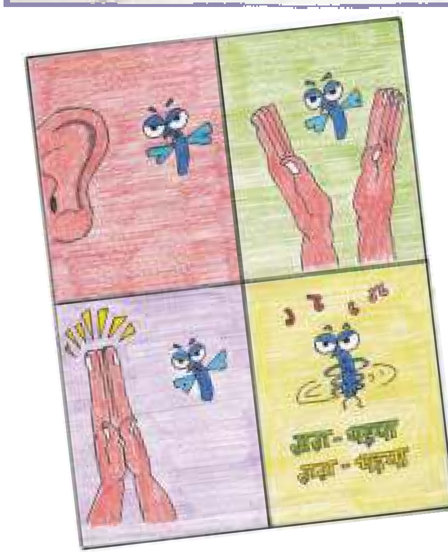

प्रान्जल कुशवाह, चौथी,
डीपीएस वाराणसी

अगस्त -सितम्बर की कविता सुनो
(एक मच्छर मिला - भाग 2)

उसे मक्खी एक आँख न भाती थी
सुनहरी रिबन पहने आ जाती थी
न चोटी, न दुम, भिनभिनाती हुई
न तीव्र, न कोमल, अजब बेसुरी
जहाँ मीठा देखा, वहीं जा गिरी
वो ताली बजा के मुड़ा और हँसा
ताता थई, ताता थई
ताता थई, ताता थई
बड़ा मनचला, एक मच्छर मिला।

गुलज़ार

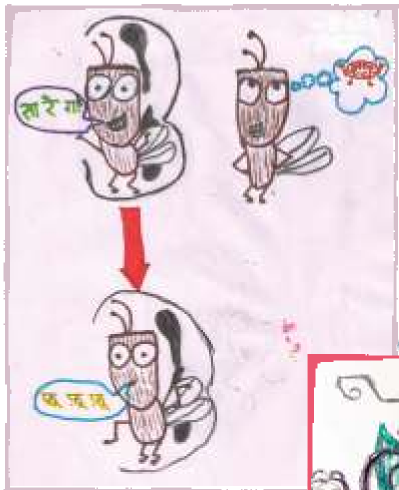

कबीर, पाँचवीं,
शिक्षान्तर स्कूल, गुड़गाँव

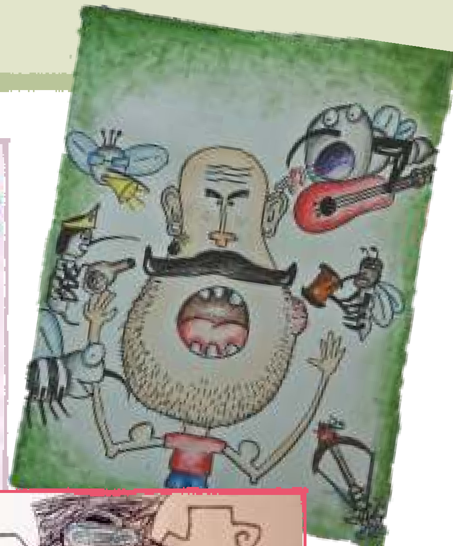

अभिषेक कुमार,
सातवीं,
बिहार बाल भवन
किलकारी,
पटना

हरीश मौर्या,
वन्डररूम बाल पुस्तकालय,
नई दिल्ली

जया मौर्या, 16 साल, बाल भवन
जबलपुर

सोनाक्षी खन्ना, चौथी, डीपीएस वाराणसी

सादिक अली, दसवीं,
बिहार बाल भवन किलकारी,
पटना

हो सकता है बड़े तुम्हें इस कविता के अर्थ बताएँ। उनके अर्थ सुनो-समझो पर चित्र अपने मन का ही बनाओ...। कोशिश करना कि तुम्हारा चित्र हमें 31 अगस्त तक मिल जाएँ। चित्र के साथ अपना पता, कक्षा, फोन नम्बर ज़रूर लिखना।

पता है -
चकमक, एकलव्य,
ई-10, शंकर नगर, शिवाजी नगर,
भोपाल -16
(फोन - 09425010115)
चाहो तो ईमेल कर दो
chakmak@eklavya.in

साँडा

करन सोनी (विकास सोनी)

काँटेदार पूँछवाली इस छिपकली का वैज्ञानिक नाम है – सारा हार्डविक्की (saara hardwickii)। सारा कुल की छिपकलियों की तीन प्रजातियाँ हैं। भारत में इस कुल की यह इकलौती प्रजाति पाई जाती है। राजस्थान और गुजरात के मरुस्थलीय क्षेत्रों के आलावा ये अफगानिस्तान और पकिस्तान के कुछ इलाकों में भी मिलती है। यह भारत की एकमात्र शाकाहारी छिपकली है। काँटेदार पूँछ इसकी एक खास पहचान है। घास के मैदानों और मरुस्थल में यह बड़ी संख्या में साथ-साथ रहती है। हर छिपकली का अपना अलग बिल और क्षेत्र होता है।

पिछली जून की बात है। झुलसा देने वाली धूप थी। कुछ धूप तेज़, कुछ थार मरुस्थल की रेत गर्म। पर एक बाज़ – लैगर फॉल्कन – की फोटो लेने का जुनून मुझ पर ऐसा सवार था कि मैं कैमरा टाँग मोटरसाइकिल पर घर से निकल पड़ा। मोटरसाइकिल एक जगह खड़ी कर मैं उस बाज़ की फोटो खींचने लगा। इतने में मेरी नज़र उस पर पड़ी। उस काँटेदार पूँछवाली छिपकली पर। वो अपने बच्चों के साथ थी। सिर उठाए। शायद उसने मोटर साइकिल के पीछे मुझे खड़ा देख लिया था। या क्या पता उसे उस बाज़ के आसपास होने का अहसास हो गया हो। लैगर फॉल्कन इस छिपकली सारा हार्डविक्की (स्थानीय भाषा में साँडा) के शिकारियों में से एक है। कारण जो भी रहा हो पर उसने खतरे को भाँप लिया था और अपने बच्चों को चेता रही थी। देखते-देखते सारे अपनी बिल में गुम हो गए। और मैं उन्हें हैरान-सा देखता रह गया। पहली बार इस छिपकली को मैंने इतने सारे बच्चों के साथ देखा था।

अब मैं बाज़ को भूलकर चिलचिलाती धूप में उनके निकलने का इन्तज़ार करने लगा था। साँडा छिपकली बेहद शर्मीली होती है। इसलिए नज़दीक से इसकी फोटो लेना मुश्किल होता है। बच्चों के साथ फोटो लेने के मौके को मैं हाथ से जाने नहीं देना चाहता था, इसलिए वहीं डटा रहा। कोई 45 मिनट बाद वो बाहर निकले। और मेरे कैमरे में कैद हो गए। मेरे लिए यह दुर्लभ क्षण था।

साँडा के बारे में...

दिन चढ़ने के साथ 7 बजे के करीब यह छिपकली अपने बिल से बाहर आती है और लगभग सारा दिन खाने की तलाश में धूप में बिताती है। खून के तापमान को नियंत्रित रखने के लिए इसका धूप में रहना ज़रूरी होता है।

मॉनसून में घास बहुत ज़्यादा होती है। ऐसे में यह बहुत सारी घास खा लेती है जो वसा के रूप में इसकी पूँछ में जमा हो जाता है। सर्दियों के 6 महीने यह शीतनिद्रा में गुज़ारती है। ये महीने इसी वसा के भरोसे कटते हैं।

मार्च-अप्रैल में यह अपनी बिल से बाहर आती है। मई इसका प्रजनन का समय होता है। मादा एक बार में 7 से 13 अण्डे देती है। 4 हफ्तों के बाद उनमें से बच्चे निकलते हैं। लगभग तीन इंच लम्बे। एक साल के भीतर-भीतर 2-3 बच्चे ही बच पाते हैं। बाकी गरुड़, बाज़, गुहेरा और जंगली बिल्ली का शिकार बन जाते हैं। बच्चों के ख्याल की ज़िम्मेदारी माँ की होती है। माँ को जब भी किसी खतरे का आभास होता है वो बिल की तरफ दौड़ती है और अपनी पूँछ और गर्दन उठाकर बच्चों को खतरे का इशारा करती है। इसके बावजूद अगर कोई बच्चा बिल में नहीं जाता तो वो उनको अपने मुँह से पकड़कर बिल की तरफ धकेल देती है।

शाम होते ही यह अपने बिल में चली जाती है और सिर से मिट्‌टी को धकेलकर बिल को बन्द कर देती है। इससे साँप जैसे रात के शिकारियों से इनका बचाव हो जाता है।

विलुप्ति का खतरा

इस प्रजाति की संख्या में अभी कोई बहुत कमी नहीं हो रही है पर इन पर कई खतरे बने हुए हैं। एक तो है, थार मरुस्थल में बढ़ती जनसंख्या के कारण पर्यावरण पर दबाव का बढ़ना। और दूसरा, इनके शरीर से मिलनेवाले तेल के लिए इनका शिकार किया जाना। इस सब के चलते इस जीव के लिए ज़िन्दा रहना काफी चुनौतिपूर्ण हो गया है।

ओसेरा

नीलम सिंह

जब से होस्टल से पढ़ने लगे ओसेरा जाना बन्द हो गया। ओसेरा जाना हम सब को पसन्द है। हम घुमन्तू जाति से हैं। साल के कई महीने हम बाहर जाते, गाँव-गाँव डेरा डालते, शिकार करते, सामान और दवाई बेचते, फिर दो-चार दिन में अगले गाँव में डेरा डालते। ओसेरा में बहुत अच्छा लगता। ठण्डी हवा, खुला आसमान और नए-नए गाँव। पर होस्टल में हमें ये मौके नहीं मिलते। फिर एक दिन पता चला कि रेशना के बा-आया पास के गाँव में डेरा डाले हैं। वे रेशना, ऐशना और उनके दोनों भाइयों की भी छुट्टी कराकर ले गए। सब का मन बहुत ललचाया। सब ओसेरे की बातें करते रहते। तब हॉस्टल की दीदी ने कहा कि तुम सब भी उनके साथ रहने जाओगी क्या? हम सब खुश हो गए।

शनिवार की शाम हमने रोटी और लोखानू बाँधी और दीदी की गाड़ी में खचाखच भरकर चल पड़े। दीदी देर से लौटी थीं इसलिए निकलते-निकलते अँधेरा हो गया। गाँव तो पहुँच गए लेकिन आधे गाँव में कालोनी बन गई थी इसलिए डेरा खोजना मुश्किल हो गया। गाँव के चौकीदार को भी ठीक से मालूम नहीं था। हमने जा सिंह (रेशना के पिता) को फोन लगाया। पर फोन तो पटेल के यहाँ चार्ज करने के लिए रखा था। फिर सिलाष सिंह (रेशना के नाना) को लगाया। तो बात हो गई ढूँढते-फिरते, पूछते-पाछते हम आखिर पहँच ही गए।

चित्र : श्वेता नम्बियार

उन्होंने डेरा एक पटेल के खेत पर लगाया था। रेशना के बा-आया, नाना-नानी, मौसी-मामा, सिताब सिंह और चारों भाई-बहन। चारों तरफ आम जामुन के बड़े-बड़े झाड़ थे। डेरा खेत के बीचों-बीच था। रेशना ने काफी देर तक बात ही नहीं की। वर्षा (रेशना की माँ) ने सबको पानी पिलाया। फिर हमने खाना खाया। वो लोग खा चुके थे। काफी रात हो चुकी थी, तो रेशना के नाना ने दीदी को रोक लिया। फट्टी को और फैलाया और हम सब पसर गए। बातें करने लगे। बहुत अच्छा लग रहा था। चाँद बहुत सुन्दर था। थोड़े-थोड़े बादल भी थे। हवा ठण्डी थी। सिताप सिंह बहुत पहेलियाँ बुझाता। एक-एक कर के सब सो गए। रातभर टिटहरी शोर मचाती रही टीं-टीं-टीं-टीं। उसने पास में ही बच्चे दिए थे।

सबेरे उठते ही हम झाड़ों से आम, जामुन तोड़कर खाने लगे। सबेरे लौटना था, पर हमारा मन नहीं भरा था। सो दीदी हमें वहीं छोड़कर लौट गईं। जाते समय रेशना का भाई दीदी के साथ लटक गया। उसे गाड़ी के आगे बैठने का शौक है। घूमने-फिरने को मिलता है। दीदी पैसे छोड़ गई थीं। हम चाय-तोस और खाने का सामान दुकान से ले आए। सबके लिए चाय बनी। वर्षा ने अपना खाना बनाया। वर्षा की माँ और बहन ने भी अपने लिए बनाया। हम तो फुरसत में थे इसलिए पहले उनका हाथ बटाया और फिर खेला।

बाकी सब बेचने की तैयारी में लगे थे। वो मथुरा से चूड़ी लाए थे। गाँव में घूमकर बेचते। चूड़ियों को 4-6-8 के सेटों में बनाकर पन्नियों में भर रहे थे। किसी का नग गिर गया हो तो चिपका देते। वर्षा, बा-आया ने तीन टोकरी बना ली। जा सिंह ने दो टोकरी बनाई।

छोटे बच्चे लकड़ी बीनने चले गए। संझली ने आटा मसला और लोई बनाई। मैंने आग जलाकर बाटी सेंकी। मैं पास के आम के झाड़ से कच्चे आम तोड़ लाई। वर्षा ने आम डालकर कढ़ी बनाई। हम सबने मज़े से खाया। ओसेरे में खाना और भी अच्छा लगने लगता है। फिर हम सब खेलने चले गए।

चित्र : शुभम लखेरा

वर्षा बोली, "रेशना-ऐशना चूड़ियाँ बेच ओओ।" रेशना बोली, "मैं नहीं जा रही।" मैंने कहा, "मैं ऐशना के साथ चूड़ियाँ बेचने जाऊँगी।" वर्षा तैयार हो गई। हमने चूड़ी बेची, फिर एक दुकान में थम्स-अप पी और दूसरे मोहल्ले में बेचने चले गए। दो सौ रुपए की चूड़ियाँ बेचीं। फिर डेरे पर चले आए। हम सब बड़े बच्चों ने चूड़ी की खराब पन्नियाँ बदलीं। इस बार हमारे साथ संझली भी गई। इस बार हमने तीन सौ की चूड़ियाँ बेचीं। फिर से एक-एक थम्स-अप पी और डेरा चले आए।

(शेष भाग पेज 61 पर)

सूखे पेड़

चकमक के अप्रैल-मई 2017 के अंक में हमने एक सूखे पेड़ की कहानी दी थी जिसमें एक उल्लू का परिवार रहता है। एक दिन कुछ लोग इसे काटने आए। पर क्या उल्लू के परिवार के रहते यह पेड़ मृत है? हमने तुमसे कहा था कि अपने घर के आसपास के सूखे पेड़ों के बारे में बताना।
तुम्हारे ढेर सारे जवाब मिले। तुम्हारे किस्से, कहानियाँ...शुक्रिया। बहुत खूब लिखा है...

– आर्या जिन्दल

एक गाँव में एक बूढ़ा किसान रहता था। उसके खेत में एक बड़ा-सा पेड़ था। वह खेती करने के बाद पेड़ के नीचे थोड़ी देर के लिए आराम करता था। ठण्डी हवा और चिड़ियों की आवाज़ से उसकी सारी थकावट दूर हो जाती थी। लेकिन धीरे-धीरे वह पेड़ सूख गया। और चिड़ियों का आना बन्द हो गया। किसान दुखी रहने लगा। एक दिन उसे एक तरकीब सूझी। उसने उस सूखे पेड़ के चारों तरफ पेड़ लगा दिए। इस तरह वहाँ चिड़ियों का आना फिर से शुरू हो गया। चिड़ियों ने उस सूखे पेड़ पर भी उपने घोंसले बना लिए। वह पेड़ फिर से ज़िन्दा हो गया।

– रक्षित जैन तीसरी डीपीएस लुधियाना

पक्षी बहुत किस्म के होते हैं। जैसे मैना, कोयल, चील और बत्तख। सूखे पेड़ जब बेजान हो जाते हैं तब जब पक्षी इन पर अपना बसेरा बना लेते हैं तब उनमें फिर से जान आ जाती है। पक्षियों का एक साथ उड़ना, चहकना और शाम को घर वापस आना बहुत अच्छा लगता है। मेरे घर के पास बहुत सारे बड़े-बड़े पेड़ हैं। इन पर तरह-तरह के रंग-बिरंगे सुन्दर पक्षी आकर चहकते हैं। पेड़ भी हमारी तरह इनके आना-जाने से बहुत खुश होते होंगे।

– अदिदेव, तीसरी, डीपीएस, लुधियाना

बहुत तेज़ धूप में एक पेड़ था। वह पूरा सूख चुका था। पानी न मिलने से उसकी सारी पत्तियाँ उतर गई थीं। धूप के कारण उसकी डालियाँ भी कमज़ोर हो गई

थीं। पेड़ कमज़ोर हो गया था। कुछ देर बाद उस पेड़ पर एक चिड़िया ने घोसला बनाया। अण्डे दिए। उसमें से दस बच्चे निकले। पेड़ को जीने का सहारा मिल गया जिससे पेड़ बहुत ज़्यादा हरा हो गया।

– दक्ष कुमार, तीसरी, डीपीएस लुधियाना

गर्मियों की छुट्टियाँ थीं। हर साल की तरह मैं अपनी

– तपलीन कौर

नानी के घर गई। नानी ने कहा, "मेरे आँगन के फल आ गए। मेरे आँगन की रोशनी आ गई।" लेकिन मुझे यह समझ में नहीं आया। मैंने माँ से पूछा। माँ ने कहा, "बेटा वो तुम्हारा इन्तज़ार कर रही थीं। बच्चों के आने से घर में चहक आ जाती है।"

नानी के घर मेरे कमरे के पीछे एक सूखा पेड़ था। मैं उसे हर साल देखकर डर जाती थी। पिछले साल वहाँ कुछ चिड़ियों ने घोंसले बनाए। सबह खिड़की खोलने पर हवा के साथ चिड़ियों की चहक कमरे में आती है। अब वहाँ और भी पक्षियों ने घोंसले बना लिए हैं। मैं रोज़ दाना डालती हूँ। अब वो पेड़ डरावना नहीं लगता। पक्षियों ने पेड़ में जान भर दी।

इन छुट्टियों में मैं नानी के घर जाने के लिए बहुत उतावली हूँ। मैं अपने पक्षी दोस्तों से मिलना चाहती हूँ। अब मुझे समझ आया कि नानी हमें घर की रोशनी क्यों कहती हैं।

– रियाज़ कौर, तीसरी, डीपीएस लुधियाना

सूखे पेड़ से मुझे अपने घर के सामने वाली सिमर की छड़ीवाली दादी याद आ गईं। जिनको सिमर के मम्मी-पापा एक साल पहले दूर के रिश्तेदार होने के बावजूद वृद्धाश्रम से अपने घर ले आए थे। सूखे पेड़ों पर जैसे पशु-पक्षियों के बसेरे से रौनक आ जाती है उसी तरह दादी के आने से सिमर के घर में रोनक आ गई। दादी सिमर और उसके भाई को रोज़ नई-नई कहानियाँ सुनातीं, उनका प्यार पेड़-पौधों के प्यार जैसा था। जैसे सूखे पेड़ केवल कुछ पशु पक्षियों के लिए ही नहीं चींटियों, कीड़े मकोड़ों पूरी दुनिया के लिए लाभदायक होते हैं उसी तरह दादी पूरे मोहल्ले को तकलीफ में घरेलू नुस्खे बतातीं। जैसे सूखे पेड़ धरती में मिट्टी की नमी को बनाए रखते हैं उसी तरह दादी ने अपने अनुभवों और प्यार से परिवार को जैसे तर कर दिया। सूखे पेड़ जैसे प्रकृति का खज़ाना हैं वैसे ही वो दादी मुझे उनके घर का अनमोल खज़ाना लगती हैं। उन्हीं से वो सुरक्षित रहते हैं।

सूखे पेड़ और बूढ़ी दादी के पास अपने लिए कुछ नहीं होता पर देने के लिए बहुत कुछ होता है।

– तपलीन कौर, तीसरी, डीपीएस, लुधियाना

एक बार दूर देश से बहुत सारे पक्षी आए। सबको

– वनशिका सागर

– *प्रियांश सागर*

घोंसला बनाने की जगह मिल गई। एक चिड़िया को कोई पेड़ नहीं मिला। तो उसने एक सूखे पेड़ पर अपना घोंसला बना दिया। आसपास के हरे पेड़ देखकर वो भी अपनी चोंच में रोज़ पानी भर-भरकर लाने लगी। और पेड़ की जड़ के पास डालने लगी। एक दिन उसने वहाँ एक छोटा-सा पेड़ उगते देखा। धीरे-धीरे वो पेड़ बड़ा हुआ। और उसने पूरे सूखे पेड़ को ढँक दिया।

– *लगन शारदा, तीसरी*

अभी सूखे हैं पर बेजान नहीं हैं ये पेड़
अभी तन्हा हैं पर हताश नहीं हैं ये पेड़
प्रकृति का खेल है निराला
कल की हरियाली का यही ठिकाना

नन्हीं कोंपलों का अहसास है ऐसा
घर में गूँजती किलकारी जैसा
पत्ते जब पक जाते हैं
पतझड़ के संग झड़ जाते हैं
खड़ा रह जाता अकेला वह तना
लड़खड़ाता हिचकिचाता जैसे कोई बूढ़ा

– *यशस्वी अग्रवाल, छठी डीपीएस पटना*

गाँव किनारे एक सूखा बरगद था। उधर कोई नहीं जाता था। एक दिन मोहन वहाँ से गुज़ारा। उसे याद आया बचपन में वो अपने दोस्तों के साथ यहीं खेलता था। इस की छाया में बैठता था। रात को उसे सपना आया। पेड़ उससे पूछ रहा था कि क्या बूढ़े होने के बाद तुम अपने मम्मी-पापा को भी इसी तरह अकेला छोड़ दोगे? वो डर गया।

अगली सुबह वह उस पेड़ के पास गया। और उस पर एक झूला टाँग दिया। अब हमेशा वहाँ बच्चों की भीड़ रहती थी। पेड़ अब बच्चों का इन्तज़ार करने लगा।

– *रयान आनन्द, चौथी, डीपीएस पटना*

मैं एक पेड़ हूँ। आज से करीब चालीस साल पहले मेरा जन्म हुआ। बचपन में मुझे काफी परेशानियाँ झेलनी पड़ीं। बड़े होकर मैंने मनुष्य को बहुत कुछ दिया। ठण्डी छाया, फल, लकड़ी, कागज़...। फिर भी मनुष्य ने मुझे काट दिया। पेड़ होना कोई अच्छी बात नहीं है।

– *सनन अरोरा, तीसरी, डीपीएस लुधियाना*

ओसेरा

(पेज 57 का शेष भाग)

अब जमकर खेला, टिटहरी के पीछे दौड़े, जामुन बटोरी, आम चूसा, पानी भरने भी गए। वहीं हाथ-मुँह धोया। लौटते में सुनैना ने जिसे हम ढेमकी कहते हैं, बिना देखे काँटे पर पैर डाल दिया। फिर दर्द के मारे हाथ-पैर झटके तो गिर भी गई। ढेमकी थोड़ी लुजलुजी है। अकसर गिरती-पड़ती रहती है।

हम रात के खाने का सामान पास की दुकान से लाए। अण्डे की सब्जी और रोटी बनाई। सब बच्चों को खिला दिया। बहुत सारे बच्चे तुरन्त ही सो गए। दिनभर मस्ती जो की थी। जो जागे थे, देर रात तक बातें करते रहे और पहेली बुझाते रहे।

सबेरे उठे और चाय पी नहीं कि पेड़ों पर झूम गए। जामुन बीनी, सिताप सिंह ने पेड़ पर चढ़कर और जामुन तोड़ी। मैं भी चढ़ी। तब तक दीदी आ गईं। जल्दी-जल्दी दो-चार आम चुनकर चूसा। दीदी चिल्लाने लगीं, “जल्दी चलो।” सिताप सिंह ने दीदी को एक पन्नी जामुन दिए। दीदी ने छह जामुन खाई और पन्नी बाँधकर हमें दे दी। हम सब गाड़ी में भरकर लौट आए। वर्षा और जा सिंह भी आए। ऑफिस के पासवाली बस्ती में चूड़ियाँ बेचने के लिए। ये ओसेरा भी बढ़िया रहा। इतने सारे दोस्तों के साथ पहली बार डेरे पर रही।

– नीलम सिंह, 12 वर्ष,
अरण्यवास, भोपाल

माथापच्ची

1. आठ लोग एक रेस्ट्रॉं में पित्ज़ा खाने गए। वहाँ बहुत भीड़ थी। औरों की बारी जल्दी आए यह सोचकर वेटर ने पित्ज़ा को चाकू से तीन बार सीधे-सीधे काटा। और उसे आठ बराबर हिस्से हो गए। कैसे काटा होगा...

2. बहुत पहले गोल्फ की बॉल की सतह सपाट होती थी। बॉल बनानेवालों ने कहा इससे बॉल दूर तक नहीं जाती और खुरदुरी सतह वाली बॉल बनाने लगे। क्या यह तर्क सही लगता है?

पहेलियाँ

बिन हल के हलवाहा
खेत जोतता, आहा
कड़ी फोड़कर मिट्टी
ढीली करता गिट्टी

लगती बड़ी अनूठी
लगे परी भी झूठी
रंग रंगीली पाँखें
आँखों में सौ आँखें

3. पाँच मछुआरे पाँच मछलियाँ पाँच मिनट में पकड़ते हैं। 50 मछुआरों को 50 मछलियाँ पकड़ने में कितना वक्त लगेगा?

4. अकसर गर्मियों में कोयल की कूक सुनाई देती है बाकी मौसमों में क्यों नहीं?

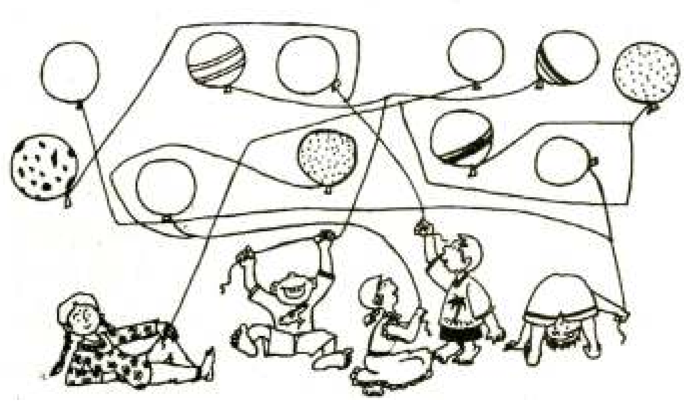

पाँच दोस्त गुब्बारे उड़ा रहे हैं। सबके हाथ में कम से कम दो गुब्बारे हैं। पर एक के हाथ में तीन हैं। कौन है वो?

गर्मी का पंखा

अंजना त्रिवेदी

चित्र :विजेन्द्र सिंह

तब हम 10-12 साल के थे। उन दिनों परीक्षा के आखरी दिन से ही गर्मी की छुट्टियाँ लग जाती थीं। हमारे लिए छुट्टी का मतलब होता – नाना के घर जाना, मामा के साथ नदी में नहाना, बाग से आम, खिरनी, शहतूत, विलायची इमली...तोड़ना। इन्हें खाने का एक कायदा होता था। आम आते ही पानी से भरी बालटी में डाल दिए जाते थे। शहतूत सफेद-गीले कपड़े में रखे जाते ताकि वे नरम बने रहें। और जब जिसका मन होता, खा लेता था। छुट्टियों में पढ़ाई के कड़े नियम होते। सुबह सबको एक पेज लिखना ही होता। किसके अक्षर आज अच्छे बने, ये नाना तय करते। उसके बाद हम क्षिप्रा नदी में नहाने जाते। खूब नहाते, कपड़े धोते और आते हुए आम के बगीचे में घुसकर आम तोड़ते।

सबको दोपहर में सोना ही होता। तब घर में पंखा नहीं था। इसलिए सारे दरवाज़े खोल दिए जाते। नानी सब को एक-एक हाथ का पंखा पकड़ा देतीं। और खुद किताब से पंखा झलतीं। उन दिनों न तो नानी को और न हमें गर्मी को लेकर कोई शिकायत थी। सब मज़े से खाते-पीते-सोते-खेलते।

एक बार हमने कहा कि इस गर्मी घर में पंखा आ जाए तो कितना अच्छा हो! पिताजी ने जनवरी आते-आते कह दिया कि पंखा चाहिए तो सब को पैसा इकट्ठा करना होगा। उसके बाद देखेंगे कि कितने का मिलता है और कहाँ से लेना है। फिर क्या था – पंखे को लेकर हम भाई-बहन सपने देखने लगे थे। हमारे रोज़ के खेलों में भी पंखा शामिल हो गया था। पंखा यहाँ रहेगा तो मैं यहाँ पढ़ूँगी और यहाँ बैठकर खाना खाऊँगी। हमारी हर बात में पंखा होता। हम उन लोगों से पूछताछ करने लगे थे जिनके घर में पंखा था। पिताजी थोड़ा चिढ़ भी

उन दिनों न तो नानी को और न हमें गर्मी को लेकर कोई शिकायत थी। सब मज़े से खाते-पीते-सोते-खेलते।

जाते थे, “पहले पैसा इकट्ठा करो फिर बात करेंगे।” हमें घर में पॉकेट मनी तो मिलती नहीं थी। बस रिश्तेदार जो दे जाते वही हमारे पास होता। हम उसे बड़ा सम्भालकर रखते। उन्हें बार-बार गिनते। पंखे के रंग को लेकर हम में बड़ी चकल्लस होती। तब बाज़ार में मेहरुन और सफेद दो रंग के पंखे होते थे।

पैसा जमा करते-करते चार महीने बीत गए थे। एक दिन जब गिनने बैठे तो 250 रुपए ही निकले और पंखा 350 रु. का आता था। सौ रुपए कहाँ से लाएँ! पिताजी ने हाथ खड़े कर दिए थे। हम भी क्या करते! गर्मी आ गई थी सो हाथवाले पंखों को साफ करने में लग गए। अब हमारे खेलों से बिजली का पंखा गायब होने लगा था। दूसरों के घरों में पंखे को देखकर मन मसोसकर रह जाते। रात में खुले में सोते तो ज़रूरत भी नहीं लगती थी।

फिर एक दिन पिताजी बिना बताए छतवाला पंखा ले आए। हम तीनों भाई-बहन कितनी ही देर तक पंखे के खोके को छू-छूकर देखते रहे। इतनी खुशी तो क्लास में फर्स्ट आने पर भी नहीं हुई थी। माँ ने अच्छी-सी साड़ी पहनी और मुझसे पंखे की पूजा करने को कहा। उस खोके को हमने सालों तक सम्भाल कर रखा था।

फिर शुरू हुई पंखा लगवाने की कवायद। पिताजी बिजली के काम में माहिर थे। हम उनके पास ही खड़े होकर कभी स्क्रू, कभी पेचकस तो कभी तार पकड़वाते रहे। रेग्यूलेटर के लिए लकड़ी के एक खोके को काटकर बॉक्स बनवाया। इस सब में करीबन दो से तीन दिन लगे क्योंकि पंखे पर खर्च करने के लिए अब पैसे बचे नहीं थे। इसके बाद एक और चिन्ता कि पंखे से बिजली का बिल भी ज़्यादा आएगा।

जब पहली बार पंखा घूमा और हमारे कपड़े, बाल उड़ने लगे। हम तो जैसे आसमान पर पहुँच गए थे। अब हमारे सारे काम पंखे के नीचे होने लगे थे। थोड़े ही दिनों में इसके भी कायदे बन गए थे – सुबह जब ठण्डी हवा चलती है तो पंखे का क्या काम! पंखा 11.30 बजे चलता और तीन-चार बजे तक बन्द हो जाता था। रात में एक-दो घण्टे चलता और फिर बन्द।

बिजली का पंखा आ गया पर घर में हाथ का पंखा फिर भी रहा। माँ कहतीं, “तुम्हारा ये पंखा कभी भी बन्द हो सकता है। तब हाथ का पंखा ही काम आएगा। जिस पंखे ने हमारी इतनी मदद की उसे कैसे फेंक सकते है?”

पिछले बीस पच्चीस सालों में हालात इस कदर बदल गए हैं कि घर में कोई भी नई चीज़ आने पर वैसी खुशी नहीं मिलती।

उस गर्मी की छुट्टियों में हमने अपनी मौसी, मामा को पत्र लिखकर अपने घर आने का न्यौता दिया। खत में लिखा – अब हमारे यहाँ पंखा लग गया है। इस बार हम नाना के घर नहीं आएँगे। आप सब यहीं आ जाना। सब आए भी, पर नाना-नानी के घरवाली नदी, खेत, आम, ताश-नदी पहाड़ के खेल शहर के घर में नदारद थे। और अब तक नदारद हैं। बस, यादों में हैं। तभी तो कुछ रोज़ पहले 26 मार्च 1986 की तारीखवाले पंखे का बिल हाथ आते ही ये किस्सा याद आ गया।

चल, कुछ और बात करते हैं!

रोशनी ख़ातून

लूडो खेलते-खेलते रोशनी और रेनू को बहुत देर हो चुकी थी। रेनू को बहुत मज़ा आ रहा था, लेकिन रोशनी उस खेल से पक चुकी थी। उसे समझ में ही नहीं आ रहा था कि ऐसा क्या है जो सिर्फ यही जीते जा रही है। उसने रेनू से कहा, "अब कोई और खेल खेलते हैं।" रेनू ने हामी भर दी। दोनों ने कैरम बोर्ड, बिज़नेस, छुपम-छुपाई जैसे बहुत सारे खेल खेले। मगर आज रेनू का ही दिन था। वह सब में जीत रही थी। तब दोनों ने सोचा कि कुछ बात करते हैं।

1.

तभी रेनू बोली कि रोशनी, तेरे बाल कितने बड़े हैं? मेरे बाल तो बड़े होते ही नहीं हैं! एक बार क्या हुआ कि हम गाँव में चाचा के घर पूजा में गए थे। चाचा के यहाँ तीन लड़कियों के बाद एक लड़का हुआ था तो उन्होंने पूजा रखवाई थी। पापा ने कहा कि तुम क्या करोगी पूजा में बैठकर, जाओ स्कूल में जाकर खेल लो। पता है, हमारे गाँव में एक बहुत बड़ा स्कूल है जो हमारे घर के पास में ही है। हम सारे बच्चे जब भी गाँव में जाते हैं तो वहीं पर खेलते हैं। हम सभी वहाँ पर खेलने गए। मेरा भाई छोटा था। हम रेस लगा रहे थे। मैं जीत रही थी। तीसरी बार जब हम रेस लगा रहे थे तो मेरा भाई रेस लगाते-लगाते गिर गया। मैं उसे उठाने गई तो उसने अपने मुँह की बबलगम मेरे बालों में चिपका दी। पता है, जब मैं दस साल की थी तब मेरे बाल बहुत सुन्दर थे। मेरी सारी बहनों से मेरे बाल सबसे बड़े थे। सभी मुझसे जलती थीं। मैं रोते-रोते घर गई। पापा ने उसे हटाने की बहुत कोशिश की मगर वह हटी नहीं। तब मेरे बाल काट दिए। मैं बहुत रोई थी। उसके बाद जब मेरे बाल बड़े हुए तो सिर में जुएँ पड़ गई थीं इसलिए दोबारा से बालों को काटना पड़ा।

तभी रोशनी बोली, "चल कुछ और बात करते हैं।"

2.

रेनू फिर से शुरू हो गई – पता है एक बार कशिश रोती हुई क्लास आई। वह क्लास के अन्दर आ ही नहीं रही थी। बस बाहर खड़े-खड़े रोए जा रही थी। मैम ने उसे खूब डाँटा। वह रोए जा रही थी। एक तो वह लेट आई थी और ऊपर से, क्लास के अन्दर भी नहीं आ रही थी। मैम ने भी उसे खूब बुलाया। जब वह नहीं आई तो मैम ने कहा कि आज तुम क्लास के बाहर ही रहोगी पूरा दिन। पता है, रोशनी जब रो रही थी तो मुझे भी रोना आ रहा था। उसकी आँखों से आँसू निकले जा रहे थे। फिर मैम ने ही उसे अन्दर बुला लिया और उसे सबसे पीछेवाली डेस्क पर बैठने को कहा। वह बैठ गई। उसने किताब भी नहीं निकाली, बस रोती रही। मैम ने बोर्ड पर कुछ काम दिया और चली गईं।

हम सभी दोस्त कशिश के पास गए। उसे चुप कराने लगे। हमें देख वह और रोने लगी। हमने उससे कहा कि क्या मैम ने डाँटा है, इसलिए रो रही हो? वह तो डाँटती ही रहती हैं। उसने न कर दी। फिर हमने पूछा कि क्या पापा ने डाँटा है? वह नहीं बोली। फिर हमने पूछा कि क्या मम्मी ने कुछ कहा? वह बोली नहीं। कुछ भी समझ में नहीं

आ रहा था कि आखिर हुआ क्या है। मुझे लग रहा था कि उसकी किसी ने पिटाई की है। उसकी आँखों के नीचे लाल-लाल सा हो रहा था और उसके हाथ पर उँगलियाँ छपी हुई थीं। पर वह बता ही नहीं रही थी। मैंने उससे पूछा, “ये तेरे हाथ पर उँगलियाँ क्यों छपी हुई हैं?” वह उसे देखकर और रोने लगी। मुझे लग रहा था कि उसे दर्द हो रहा होगा। हमने पूछा, “बता तो सही, हुआ क्या है?” तो उसने अपने सिर से कपड़ा हटाया। मालूम है? उसके बाल कटे हुए थे। हम सबने पूछा, “यह क्या हुआ?”

वह रोते-रोते बोली, “मम्मी ने कटवा दिए। बोलती हैं कि सुबह-सुबह मेरी चोटी करने में बहुत टाइम जाता है और उन्हें काम पर जाने में देरी हो जाती है। इसलिए कटवा दिए।”

तभी रोशनी बोली, “चल कुछ और बात करते हैं।”

3.

मेरा भाई बहुत बुरा है मगर मम्मी उसकी तारीफ करती रहती हैं। वह रात में बहुत घूमता है। उसका ट्यूशन भी रात आठ बजे का है। यह भी उसी ने खुद रखवाया था। हम तो सोचते थे कि वह ट्यूशन गया है मगर वह तो घूमता रहता था। एक बार मम्मी ने उसे सरकारी शौचालय के पास पकड़ा था। मालूम है, वहाँ पर बहुत सारे बड़े लड़के और छोटे लड़के रोज़ खड़े होते हैं। पता नहीं कैसी-कैसी बातें करते हैं। पापा ने उसे पहले से ही कह दिया था कि उस तरफ कभी मत जाना लेकिन वह मानता ही नहीं था।

उस दिन वहाँ पर बहुत सारे लड़कों का एक झुण्ड खड़ा हुआ था। पास में ही शादी का टेंट लगा था। वे लड़के एक-दूसरे से मज़ाक कर रहे थे। कुछ ग्रुप बनाकर टेंट के किनारे बैठे थे। उनके हाथ में कुछ था, जिससे वे कुछ कर

चित्र - सागर अरणकल्ले

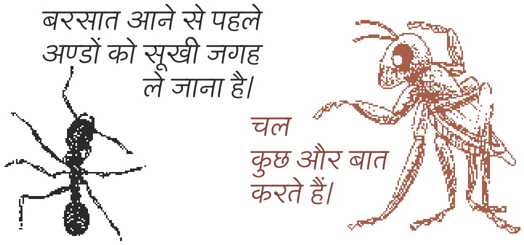

रहे थे। जब भी वहाँ से कोई गुज़रता तो वे उठ जाते और दोबारा से बैठ जाते। जब मम्मी उसे ढूँढते हुए वहाँ पर गईं तो मेरा भाई भी उनके ही बीच में बैठा था। मम्मी को देखकर सभी भागने लगे। मगर भाई को मम्मी ने पकड़ लिया। जैसे ही मम्मी ने उसे पकड़ा तो उसकी हालत खराब थी। हाथ में दर्द हो रहा था और पूरे कपड़े काले हुए पड़े थे। जब घर पर आया तो पापा ने बुलाया। पापा ने पूछा कि ये क्या करवाया है तूने? तो पता है क्या बोला? बोला कि उसका दोस्त रोहित कह रहा था कि इससे वह हीरो बन जाएगा। क्योंकि मेरे भाई को हीरो बनने का बड़ा शौक है। वह अखबार से सारे हीरो की फोटो काट-काट कर अपनी किताब में रखता रहता है। पापा ने उस रात उसे बहुत पीटा। पता है, उसने क्या किया था? हाथ में टैटू बनवाया हुआ था और गजनी की तरह बाल करवा रखे थे।

तभी रोशनी फिर से बोली, "चल कुछ और बात करते हैं।"

4.

गुड़िया दीदी को उनके ससुरालवालों ने घर से निकाल दिया है। वह कहते हैं कि अगर दोबारा वापस आना है तो घर में ही रहना होगा। कहीं काम करने की ज़रूरत नहीं है। बस अपना घर देखो। मुझे तो इतना पता है कि गुड़िया दीदी हमारी गली की सबसे अच्छी दीदी हैं। वह जब भी काम से वापस आती थीं तो हमारे लिए कुछ न कुछ लाती थीं। जब उनकी शादी हुई थी तब भी वह काम पर जाती थीं। मगर कुछ दिनों बाद उनके घर में उनके काम को लेकर लड़ाई होने लगी थी। गुड़िया दीदी अपनी मम्मी के यहाँ वापस आ गई थीं। हम उनके साथ में खूब खेलते थे। वह पूरा-पूरा दिन घर पर ही रहती थीं। पर थोड़े ही दिनों के बाद वह वापस अपने ससुराल चली गईं। लेकिन पता नहीं क्या हुआ कि राहुल भइया गुड़िया दीदी को उनके घर से ले आए। वहाँ उनको बहुत मारा गया था। उनके चेहरे पर मार के निशान थे। उनकी आँखें लाल हो रखी थीं। वह बीमार-सी लग रही थीं। हमें भी नहीं देख पा रही थीं। मुझे उन्हें देखकर बहुत दुख हो रहा था। उनकी मम्मी, मेरी मम्मी को बता रही थीं कि गुड़िया को उन्होंने बुरा-बुरा बोला है कि वह अच्छी लड़की नहीं है। मम्मी मेरे पापा को बता रही थीं कि गुड़िया को एक रात काम पर से आते-आते देर हो गई थी। उन्होंने घर में फोन किया कि वह रास्ते में है मगर कोई गाड़ी नहीं है। लेकिन उनके पति उनको लेने नहीं गए। जब उनको कोई गाड़ी नहीं मिली तो उनके यहाँ पर रहनेवाले एक लड़के ने उन्हें देखा और अपनी बाइक पर बैठा लिया। और वह उनके साथ घर आ गई। मम्मी बता रही थीं कि बस तभी से उनके घर में लड़ाई शुरू हो गई थी। उनके पति ने उनके सिर पर ज़ोर-से मारा।

तभी रोशनी ने पूछा, "फिर क्या हुआ?"

फिर उन्हें अस्पताल लेकर गए और उनका इलाज करवाया। पता है, डॉक्टर ने उनके सारे बाल काट दिए।

तभी रोशनी फिर से बोली, "बस, चल कुछ और बात करते हैं।"

(तेरह साल की रोशनी ख़ातून सातवीं में पढ़ती हैं और दक्षिणपुरी, दिल्ली में रहती हैं। पिछले एक साल से अंकुर लर्निंग कलेक्टिव से नियमित जुड़ी हुई हैं।)

चित्र पहेली
बाएँ से दाएँ
ऊपर से नीचे
1000

RNI क्र. 50309/85 डाक पंजीयन क्र. म.प्र. / भोपाल / 261 / 2015-17

बरसात

इस्माइल मेरठी

वो देखो उठी काली काली घटा
है चारों तरफ छाने लगी घटा
घटा के जो आने की आहट हुई
हवा में भी इक सनसनाहट हुई
घटा आन कर मेह जो बरसा गई
तो बे-जान मिट्टी में जान आ गई
ज़मीं सब्ज़े से लहलहाने लगी
किसानों की मेहनत ठिकाने लगी
जड़ी-बूटियाँ पेड़ आए निकल

अजब बेल पत्ते अजब फूल फल
हर इक पेड़ का यक नया ढंग है
हर इक फूल का इक नया रंग है
ये दो दिन में क्या माज़रा हो गया
कि जंगल का जंगल हरा हो गया
जहाँ कल था मैदान चटयल पड़ा
वहाँ आज है घास का बन पड़ा
हज़ारों फुदकने लगे जानवर
निकल आए गोया कि मिट्टी के पर

चटयल - वीरान

प्रकाशक एवं मुद्रक अरविन्द सरदाना द्वारा स्वामी रैक्स डी रोज़ारियो के लिए एकलव्य, ई-10, शंकर नगर, 61/2 बस स्टॉप के पास, भोपाल 462016, म.प्र. से प्रकाशित एवं आर. के. सिक्युप्रिन्ट प्रा. लि. प्लॉट नम्बर 15-बी, गोविन्दपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोविन्दपुरा, भोपाल - 462021 (फोनः 0755 - 2687589) से मुद्रित।
सम्पादकः सुशील शुक्ल